इकाई – 2
जनसंख्या और समुदाय
(Population and Community)

सामान्य अर्थों में समष्टि (Population) का अर्थ जनसंख्या अर्थात जीवों की संख्या से लिया जाता है। अंग्रेजी में प्रयुक्त 'पापुलेशन' शब्द लेटिन भाषा के शब्द 'पोप्यूलस' से लिया गया है जिसका अर्थ होता है लोग (People)। वहीं पारिस्थितिकी में समष्टि का अर्थ एक विशेष प्रजाति या कई सम्बन्धित जातियों के समस्त प्राणियों से है जो एक विशेष समय पर विशेष क्षेत्र में पाये जाते हैं।

परिभाषा (Definition)

विभिन्न वैज्ञानिकों ने समष्टि पारिस्थितिकी शब्द को अलग–अलग प्रकार से परिभाषित किया है–

रूट (1967) के अनुसार, "किसी जन्तु प्रजाति की कार्यात्मक इकाई के सदस्यों के उस समूह को जो वातावरण से सीधे अनुक्रियायें करते हुए स्थान विशेष के प्राकृतिक स्रोतों का समान रूप से शोषण करते है, समष्टि (Population) कहते हैं।"

मकनॉटन (1973) के अनुसार, "समान आनुवंशिकी के उस समूह को जो समान समय व स्थान पर पाये जाते हैं, समष्टि कहलाते हैं।"

क्रेब्स (1976) के अनुसार, "किसी विशेष समय और स्थान पर प्रजाति विशेष के समूह को वहाँ की जीव संख्या या समष्टि कहते हैं।"

अध्ययन की दृष्टि से समष्टि को दो भागों में विभाजित किया गया है –

1. एक जातीय समष्टि (Monospecific population) – एक समष्टि में केवल एक जाति को शामिल किया जाता है।

2. बहुजातीय समष्टि (Polyspecific population) – एक समष्टि के अध्ययन में कई जातियों को शामिल किया जाता है।

समष्टि पारिस्थितिकी में किसी समष्टि की वद्धि, घनत्व, आकार, विभाजन, जन्मदर, प्रतिस्पर्द्धा, मृत्युदर, सहनशीलता आदि का अध्ययन किया जाता है।

जनसंख्या के अभिलक्षण
(Population Characteristics)

एक जनसंख्या के अध्ययन हेतु निम्नलिखित अभिलाक्षणिक गुणों का अध्ययन किया जाता है–

(1) आकार एवं घनत्व (Size and density)

(2) प्रकीर्णन (Dispersion)

(3) जन्म दर (Natality)

(4) मृत्यु दर (Morality)

(5) आयु संरचना (Age structure)

(6) लिंगानुपात (Sex ratio)

(7) वृद्धि दर (Growth rate)

(8) जैविक विभव (Biotic potential)

1. आकार एवं घनत्व (Size and density) – किसी भी जनसंख्या में उसके सदस्यों की संख्या को सम्पूर्ण आकार के रूप में विरूपित किया जाता है जबकि पर्यावरण के प्रति इकाई क्षेत्रफल में उपस्थित सदस्यों की संख्या उसका घनत्व कहलाती है। बड़े जीवों को जैसे प्रति हेक्टेयर 200 वृक्षों की संख्या तथा छोटे जीवों जैसे पादप प्लवकों की 5 मिलियन कोशिकाऐं प्रति क्युबिक मीटर जल के रूप में दर्शाया जाता है। भार के रूप में इसे 200 पौण्ड मछलियों की प्रति हेक्टेयर जल सतह के रूप में दर्शाया जा सकता है।

प्रकृति में जीवों का वितरण भिन्न–भिन्न प्रकार से होता है अतः घनत्व भी इसी आधार पर दो प्रकार का हो सकता है–

(i) अपरिष्कृत घनत्व (Crude density) – किसी भी जीव की प्रति इकाई संख्या या जैवभार कुल क्षेत्रफल का अपरिष्कृत घनत्व कहलाता है।

(ii) विशिष्ट या पारिस्थितिकीय घनत्व (Specific or ecological density) – किसी भी जीव की प्रति इकाई संख्या या घनत्व कुल आवासीय क्षेत्रफल का विशिष्ट घनत्व कहलाता है। आवासीय क्षेत्रफल वह क्षेत्र है जिसमें वास्तविक रूप से जनसंख्या निवास करती है।

उपरोक्त दोनों घनत्व प्रकारों को निम्न प्रकार से भी समझाया जा सकता है। प्रकृति में सामान्यतः जीव जातियाँ समूह में उगती हैं लेकिन उनका वितरण कभी भी समान नहीं होता है। उदाहरण के तौर पर पादप जातियाँ केसिया टोरा एवं ऑप्लीसेम्नस छायादार क्षेत्रों में सघनता से तथा खुले क्षेत्रों में विरल रूप से उगती हैं। इस प्रकार पूर्ण क्षेत्रफल (छायादार व खुला) का घनत्व अपरिष्कृत घनत्व कहलायेगा जबकि केवल छायादार क्षेत्रों का घनत्व जहाँ पर अधिकांश पादप जातियाँ सघनता से उग रही है, पारिस्थितिकीय घनत्व कहलायेगा।

घनत्व का मापन उस समय और महत्वपूर्ण हो जाता है जब किसी क्षेत्र की जनसंख्या समय के साथ परिवर्तित हो रही है या तो घट रही है या बढ़ रही है। ऐसे समय में दोनों घनत्व का मान में अन्तर होगा। बदलती हुई जनसंख्या क्षेत्रों में सापेक्षिक बाहुल्यता अधिक बेहतर सूचक होगा।

2. प्रकीर्णन (Dispersion) – किसी भी क्षेत्र में जनसंख्या के सदस्यों का एक दूसरे से सापेक्षिक स्थानिक स्वरूप प्रकीर्णन कहलाता है।

वितरण सामान्यतः तीन प्रकार का होता है–

(i) नियमित प्रकीर्णन (Regular dispersion) – इस प्रकार के प्रकीर्णन में जनसंख्या के सदस्य एक दूसरे से लगभग समान दूरी पर उपस्थित रहते हैं। यह प्रकृति में कभी–कभी होता है। लेकिन फसली क्षेत्रों में यह व्यवस्थित तंत्र के रूप में पाया जाता है।

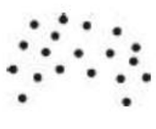

(ii) यादृच्छिक प्रकीर्णन (Random dispersion) – इस प्रकार के प्रकीर्णन में जनसंख्या के एक सदस्य स्थिति दूसरे पड़ौसी सदस्यों से असम्बन्धित होती है। यह भी प्रकृति में सामान्यतः कभी–कभी होती है।

(iii) सामूहिक प्रकीर्णन (Clumped dispersion) – अधिकांश जनसंख्या में इस प्रकार का प्रकीर्णन सामान्यतः पाया जाता है। जिसमें जनसंख्या सदस्य समूहों में पायी जाती है तथा इनके बीच–बीच में सदस्य कम या नहीं भी पाये जाते हैं। इस प्रकार का प्रकीर्णन सामानिक समूहों जैसे एक ही कुल समूह या कुछ वातावरणीय परिस्थितियों के फलस्वरूप होता है।

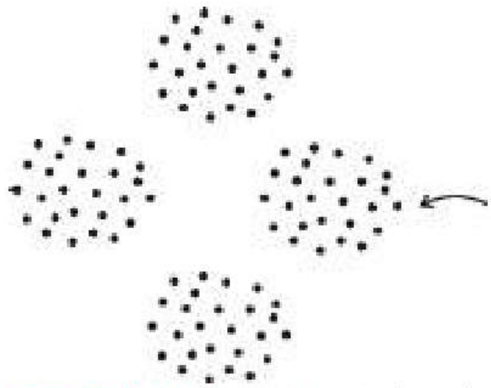

3. जन्म दर (Natality) – किसी समष्टि में इकाई समय में जन्मे नए सदस्यों की संख्या को जन्म दर (Natality or birth rate) कहा जाता है। यह समष्टि की जनसंख्या में हो रही वृद्धि को दर्शाती है।

जन्म दर की गणना के समय कई कारकों को ध्यान में रखा जाता है – आयु, समय, भोजन, जैविक या अजैविक आदि अनेक कारक जन्म दर को प्रभावित करते हैं। उदाहरणतः समष्टि के अलग–अलग आयु वर्ग के लिए जन्म दर अलग–अलग होती है यथा युवावस्था में जन्म दर अधिकतम तथा उत्तरोतर वृद्धावस्था में यह कम होती जाती है।

जन्म दर का निम्न दो रूपों में अध्ययन किया जाता है–

(i) उच्चतम या कार्यिकीय जन्म दर (Maximum or physiological natality) – इसे परम, सम्भावित या क्रियाशील जन्म दर भी कहा जाता है, यह किसी समष्टि के लिए नियत (Constant) होती है अतः इसके मान पर पर्यावरणीय कारकों का कोई प्रभाव नहीं पड़ता लेकिन यह कार्यिकीय कारकों से प्रभावित होती है इसे उत्पादकता दर (Fecundity rate) के रूप में भी प्रदर्शित किया जाता है।

(ii) पारिस्थितिकीय या वास्तविक जन्म दर (Ecological or realised natality) – इसका मान विभिन्न पर्यावरणीय कारकों से प्रभावित होता है अर्थात् परिवर्तनशील होता है। अतः सभी वास्तविक दशाओं में समष्टि के जीवों की संख्या में होने वाली वृद्धि को पारिस्थितिकीय या वास्तविक जन्म दर कहते हैं (चित्र 2.1)।

जन्म दर की गणना निम्न सूत्र से की जा सकती है–

$$N = \frac{B}{t}$$

$$\text{जन्म दर} = \frac{\text{नए उत्पन्न जीवों की संख्या}}{\text{समय}}$$

जन्म दर को निम्न प्रकार से व्यक्त किया जाता है –

परम जन्म दर $(B) = \frac{\Delta Nn}{\Delta t}$

विशिष्ट जन्म दर $(b) = \frac{\Delta Nn}{N\Delta t}$

जहाँ – N = वास्तविक जीवों की संख्या

n = नए जीवों की संख्या

t = समय

4. मृत्यु दर (Mortality) – इकाई समय में किसी समष्टि में मरने वाले जीवों की संख्या समष्टि की मृत्यु दर कहलाती है। जन्म दर की तरह ही मृत्यु दर को भी निम्न दो रूपों में व्यक्त किया जाता है–

(i) न्यूनतम मृत्यु दर (Minimum mortality) – इसे विशिष्ट या परम मृत्यु दर भी कहते हैं। यह आदर्श परिस्थितियों अर्थात् बिना किसी सीमाकारी कारकों के प्रभाव में समष्टि में होने वाली मृत्यु की संख्या में प्रदर्शित करती है। किसी समष्टि के लिए इसका मान स्थिर होता है एवं पर्यावरणीय कारकों का इस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। अर्थात् जीवों की मृत्यु आदर्श परिस्थितियों में सम्पूर्ण आयु पूरी कर लेने के पश्चात् ही होती है।

(ii) पारिस्थितिकीय या वास्तविक मृत्यु दर (Ecological or realised mortality) – वास्तविक परिस्थितियों में मृत्यु दर समष्टि में होने वाले जीवों की मृत्यु, वास्तविक या पारिस्थितिकीय मृत्यु दर कहलाती है। इसका मान पारिस्थितिकीय व अन्य कारकों द्वारा प्रभावित होता है अतः मान परिवर्तनशील होता है।

$$N = \frac{D}{t}$$

समष्टि का अस्तित्व बना रहे इसके लिए मृत्यु दर से भी जीवित दर या जन्म मृत्यु दर महत्वपूर्ण कारक है, अर्थात जन्मे सदस्यों में से कितने सदस्य जीवित रहे।

जीवित दर सामान्यतः जीवित चक्र द्वारा दर्शायी जाती है।

$$\text{जन्म मृत्यु दर (Vital index)} = \left(\frac{\text{जन्म}}{\text{मृत्यु}} \times 100 \right)$$

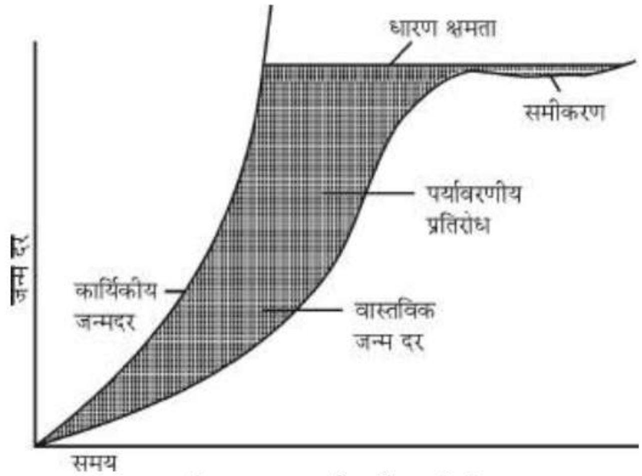

चित्र 2.1 : पर्यावरणीय प्रतिरोध

5. आयु संरचना (Age structure) – सभी प्रजातियों के जीव लगभग सभी आयु वर्गों में पाए जाते हैं तथा प्रत्येक आयु वर्ग में जीवों की संख्या अलग–अलग होती है। साथ ही किसी निश्चित आयु वर्ग में जीवों की अधिकतम संख्या भी जाति विशेष के लिए अभिलाक्षणिक होती है। इस प्रकार किसी जीव संख्या में विभिन्न आयु वर्ग के सदस्यों की तुलनात्मक प्रचुरता को जीव की आयु संरचना (Age structure) या आयु वितरण (Age distribution) कहा जाता है।

सामान्यतः तीव्र रूप से बढ़ती हुई प्रजाति में युवा तथा बाल आयु वर्ग सदस्यों की संख्या अधिक होती है वहीं पतनशील प्रजाति में इसके विपरीत वृद्धावस्था के सदस्यों की संख्या तुलनात्मक रूप से अधिक होती है।

अलग–अलग आयु स्तरों में भी मृत्यु दर अलग–अलग होती है इसके अलावा जिन प्रजातियों में उच्च प्रजनन दर होती है उनमें आरम्भिक अवस्था में मृत्यु दर भी अधिक होती है तथा जिन प्रजातियों में जन्म दर कम होती है उनमें प्रारम्भिक अवस्था में मृत्यु दर कम होती है। किन्तु जिन प्रजातियों में समष्टि स्थिर हो जाती है उनमें जन्म दर व मृत्यु दर समान रहती है तथा आयु वितरण भी लगभग समान रहता है। बोडनीमर (Bodeneimer, 1938) द्वारा आयु संरचना का विवरण तीन श्रेणियों में दिया गया है–

(1) प्रजनन–पूर्व आयु (Pre–reproduction Age)

(2) प्रजनन आयु (Reproductive Age)

(3) प्रजनन–पश्चात् आयु (Post–reproductive Age)

भिन्न–भिन्न प्रजातियों में अलग–अलग प्रजनन–पूर्व आयु, प्रजनन आयु व प्रजनन–पश्चात् आयु पाई जाती है। कुछ जीवों में प्रजनन पूर्व आयु अधिक होती है तो कुछ में प्रजनन आयु या कुछ में प्रजनन पश्चात् आयु अधिक पाई जाती है इस आधार पर भी ऊपर दिखाए अनुसार जीवों का वर्गीकरण किया गया है। मनुष्य में ये तीनों आयु लगभग समान होती है।

आयु स्तूप (Age Pyramids) – किसी जीव की प्रजाति में उसकी आयु के अनेक समूहों के अनुपात को रेखागणितीय रूप से

दिखाने वाले मॉडल को आयु स्तूप (Age pyramid) कहा जाता है। इन आयु स्तूपों में आधार रेखा (x अक्ष पर) किसी विशेष आयु वर्ग में जीवों की संख्या तथा लम्बवत अक्ष (ल) पर आयु को आरेखित किया जाता है, इस प्रकार तीन तरह के आयु स्तूप प्राप्त होते हैं–

(a) वृहद आधार वाला स्तूप

(b) घण्टाकार बहुभुज

(c) कुम्भाकार स्तूप

(a) वृहद आधर वाला स्तूप (A pyramid with broad base) – तीव्र गति से वृद्धि करने वाली समष्टि द्वारा यह स्तूप दर्शाया जाता है अतः समष्टि में वयस्कों की संख्या अधिकतम होती है, मृत्यु दर वृद्धावस्था में ही अधिक होती है। कम समय में ही ये प्रजातियां अपनी संख्या को बहुत अधिक बढ़ा लेती है उदाहरणतः यीस्ट (Yeast), मक्खी (House fly), पैरामीशियम (*Paramecium*) आदि (चित्र 2.2)।

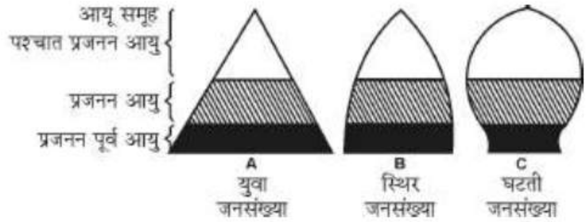

चित्र 2.2 : भिन्न प्रकार के आयु पिरैमिड दर्शाता परिकल्पित

(b) घण्टाकार बहुभुज (A bell shaped polygon) – इस प्रकार का स्तूप दर्शाने वाली समष्टि में वृद्धि दर (Growth rate) कम तथा स्थिर होती है। इनमें वयस्कों की संख्या कम तथा स्थिर होती है। इनमें वयस्कों की संख्या कम परन्तु वृद्धों की संख्या अधिक होती है।

प्रजनन–पूर्व आयु तथा प्रजनन आयु श्रेणी लगभग समान परिमाप की होती है तथा प्रजनन पश्चात आयु का वर्ग सबसे छोटा होता है जिससे स्तूप घण्टाकार (Bell shaped) बनता है।

(c) कुम्भाकार स्तूप (An urn-shaped pyramid) – यह स्तूप किसी पतनशील समष्टि द्वारा दर्शाया जाता है। इसमें प्रारम्भिक आयु वर्ग तुलनात्मक रूप से छोटा होता है तथा वृद्धावस्था वाला वर्ग बड़ा होता है। जिससे जन्म दर कम हो जाती है व प्रजनन–पूर्व आयु श्रेणी का अनुपात प्रजनन व प्रजनन–पश्चात् आयु की तुलना में अत्यन्त कम होता है। फलतः कुम्भाकार आकृति वाला स्तूप बनता है।

आयु स्तूप विभिन्न समष्टियों को आयु वितरण को सरल रूप से प्रदर्शित कर तुलना करने की एक सुगम विधि है, जिससे समष्टि की वृद्धि दर का आंकलन भी किया जा सकता है।

6. आयु एवं लिंग अनुपात (Age and sex ratio) – सभी एक समष्टि वृद्धिशील, पतनशील या स्थिर हो सकती है। आयु वितरण समष्टि की जन्मदर व मृत्युदर को नियंत्रित करता है। समष्टि में आयु अनुपात, प्रमुख रूप से जीव संख्या की कच्ची जन्मदर व मृत्युदर (Crude natality and mortality) से प्रभावित होता है। समष्टि के घनत्व का तब तक वास्तव में कोई अर्थ नहीं है जब तक इसकी आयु संख्या पर विचार न किया जाये। समष्टि को तीन पारिस्थितिकीय कालों में विभाजित किया जा सकता है– (i) पूर्व प्रजनन काल (Pre-reproductive period), (ii) प्रजनन काल (Reproductive period), (iii) पश्च प्रजनन काल (Post-reproductive period)। इन तीनों आयुओं की तुलना भिन्न–भिन्न पाई जाती है व बदलती रहती है। यद्यपि समष्टि घनत्व समान रहता है। एक ऐसी समष्टि जिसमें उत्प्रवास (Emigration) व अप्रवास (Immigration) नहीं हो रहा हो उसमें विभिन्न आयुओं में अनुपात की प्रवत्ति स्थिर (Constant) होने की बनी रहती है जहां जन्मदर मृत्युदर के बराबर हो। आयु अनुपात भविष्य के दृष्टिकोण से अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि प्रजननता एक निश्चित आयु वर्ग तक ही सीमित रहती है और मृत्युदर दूसरे आयु वर्गों में अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है।

पारिस्थितिकीविद् इस विचारधारा के हैं कि वन्य जीवों के एक तुलनात्मक स्थिर अभयारण्य के मुख्य जन्तुओं के युवा व वयस्क जीवों के मध्य अनुपात करीब 2:1 होता है जो कि स्थिर होता है। यह भी वर्णित है कि वृद्धिशील समष्टि में युवा जीवों की संख्या अधिक होती है। जबकि अवनतिकारी समष्टि में वयस्क जीव अधिक संख्या में पाये जाते हैं।

नर व मादा जीवों में भिन्नता लिंग कहलाती है। लिंग के आधार पर पादपों को एक लिंगाश्रयी (dioecious) व उभयलिंगाश्रयी (monoecious) वर्गों में विभक्त किया गया है। समष्टि में कुछ प्रजातियों का लिंग अनुपात समष्टि घनत्व परिवर्तन के साथ परिवर्तित हो सकता है। लिंग का नियंत्रण तापक्रम दीप्तिकाल, खनिज व वृद्धि पदार्थों आदि से भी होता है। जैसे कि इक्वीसीटम (*Equisetum*) के प्रोथैलस सामान्यतया उभयलिंगाश्रयी होते हैं व नर व स्त्री जननांग धारण करते हैं (जबकि पारिस्थितिक परिस्थितियां अनुकूल होती हैं)। पुंधानी व स्त्रीधानी यदा कदा ही एक ही समय पर एक साथ एक ही प्रोथैलस पर पाई जाती है। इक्वीसीटम की कुछ प्रजातियों में प्रोथैलस एकलिंगाश्रयी होते हैं। सामान्यतया सघन विन्यासित व अल्प पोषण स्थिति में पाये जाने वाले प्रोथैलस पर पुंधानी उत्पन्न

होती है जबकि विरल विन्यासित प्रोथैलस पर स्त्री धानियां (Archegonia) उत्पन्न होती है। ऐसे प्रोथैलस जो कि समुचित मात्रा में भोजन संश्लेषित कर सकते हैं पहले स्त्री धानियां (Archegonia) निर्मित करते हैं व बाद में पुंधानियों (Antheridia) का निर्माण करते हैं।

आयु वितरण के अतिरिक्त भिन्न लिंगों के जीवों का अनुपात भी समष्टि आमाप को प्रभावित करता है। अधिकांश पादप प्रजातियों में पादप उभयलिंगाश्रयी होते हैं व यदा कदा ही नर व मादा पादप पृथक–पृथक होते हैं (जैसे कि साइकस, इफीड्रा)। जन्तुओं में कई प्रजातियों के नर व मादा जीवों की संख्या में अत्यधिक विविधता पाई जाती है। उदाहरणार्थ सामाजिक कीट जैसे कि शहद मक्खी (Apies) व दीमक की समष्टि में मात्रा एक ही मक्खी मादा (Queen) होती है जो कि प्रजनन हेतु सक्षम होती है व अन्य मक्खियां नर या नपुंसक (Neutral) होती हैं। लिंग अनुपात में परिवर्तन आयु के साथ भी आता है क्योंकि नर व मादा जीवों की मृत्युदर में भिन्नता पाई जाती है।

लिंग अनुपात किसी विशिष्ट समय पर प्रजाति विशेष के उस अनुपात को दर्शाता है जो कि उस समय के नर व मादा जीवों के मध्य पाया जाता है। मानव समष्टि के संदर्भ में लिंग अनुपात द्वारा किसी राष्ट्र की श्रम संरचना, विवाह की आयु तथा आय के बारे में जानकारी प्राप्त की जा सकती है। इस अनुपात की गणना हेतु पुरुष संख्या को स्त्री संख्या से भाजित किया जाता है व भाग फल को 1000 से गुणित कर दिया जाता है जिसे सूत्रावत निम्नानुसार लिख सकते हैं –

$$SR = \frac{M}{F} \times 1000$$

सूत्र में

SR = लिंग अनुपात

M = जनगणना में पुरुष संख्या

F = जनगणना में स्त्री संख्या

उदाहरण स्वरूप किसी देश की जनगणना में पुरुषों की संख्या 50 मिलियन व स्त्रियों की संख्या 40 मिलियन है तो

$$SR = \frac{M}{F} \times 1000$$
$$= \frac{50}{40} \times 1000 = 1250$$

अतः लिंगानुपात 1250 पुरुष प्रति हजार स्त्रियां होगा।

यदि लिंगानुपात 1 से अधिक है तो पुरुषों की संख्या स्त्रियों से अधिक है व जब यह अनुपात 1 से कम है तब पुरुषों की संख्या स्त्रियों से कम होगी, परन्तु यदि यह अनुपात एक है तब पुरुषों तथा स्त्रियों की संख्या बराबर होगी।

सामान्यतः जन्म के समय लिंगानुपात 105 होता है। इसका कारण यह है कि लड़कों का जन्म लड़कियों की तुलना में अधिक होता है। लड़कों की बाल मृत्युदर (Infant mortality of boys) लड़कियों की बाल मृत्युदर (Infant mortality of girls) की तुलना में अधिक होती है। फलस्वरूप विषम लिंगानुपात चार वर्ष की आयु तक बराबर हो जाता है। इस आयु वर्ग के पश्चात् सामान्यतः पुरुषों की संख्या अनेक आयु वर्ग में घटने लगती है तथा 95 वर्ष की आयु में पुरुषों की संख्या स्त्रियों की तुलना में आधी रह जाती है। सामान्यतः लिंगानुपात 90 से कम आयु पर तथा 110 से अधिक आयु पर असंतुलित रहता है।

7. वृद्धि दर (Growth rate) – जनसंख्या की वृद्धि दर अनेक कारणों द्वारा प्रभावित होती है। इसमें जन्म दर, मृत्यु दर, आयु एवं लिंगानुपात आदि का वर्णन अध्याय के पूर्व में कर चुके हैं।

वाइटल इन्डेक्स जो कि जीवों की जन्म व मृत्यु दर का अनुपात होता है, के अनुसार जहाँ जन्म दर ज्यादा हो जनसंख्या में धनात्मक वृद्धि होगी तथा जहाँ मृत्यृ दर ज्यादा हो तो जनसंख्या में कमी होगी। जहाँ पर जन्म व मृत्यु दर समान हो तो यह अनुपात स्थिर हो जाता है। जनसंख्या वृद्धि को निम्न कारक भी प्रभावित करते हैं –

(i) बहिःप्रवास या उत्प्रवासन (Emigration) – जब किसी स्थान से जीवों की एक संख्या किसी दूसरे स्थान पर चली जाए तो वह बहिःप्रवास कहलाती है। अगर इस प्रकार के प्रवास में जीव पुनः अपने मूल स्थान पर लौटकर नहीं आता है तो यह एक स्थाई गमन होता है। इससे उस स्थान की जनसंख्या में कमी आ जाती है।

(ii) अन्तःप्रवास या आप्रवासन (Immigration) – किसी एक स्थान पर एक जीव जाति के आगमन को अन्तःप्रवास या आप्रवासन कहते हैं। यहाँ पर भी आये हुए जीव पुनः नहीं लौटते हैं तो इससे जनसंख्या में वृद्धि होती है।

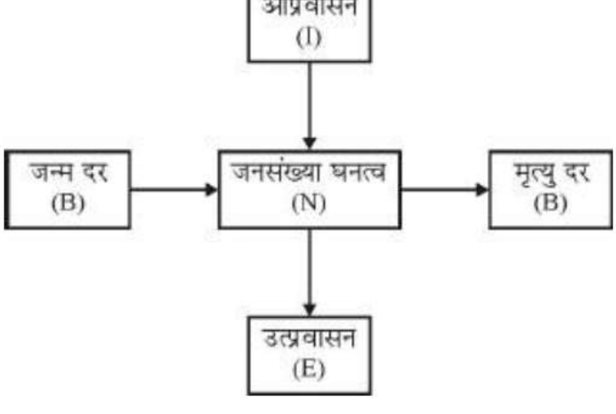

यदि N_1 एक समय पर जनसंख्या घनत्व है, B जन्म दर, I आप्रवासन तथा D मृत्यु दर एवं E उत्प्रवासन है तो इसे निम्न समीकरण द्वारा दर्शाया जा सकता है –

$$N_1 + I = N_1[(B+I) - (D+E)]$$

उपरोक्त समीकरण द्वारा यह समझा जा सकता है कि यदि जन्म दर एवं आप्रवासन की दर अधिक हो तो जनसंख्या घनत्व बढ़ता है लेकिन अगर मृत्यु दर एवं उत्प्रवासन दर अधिक हो तो जनसंख्या का घनत्व घट जाता है। जब जन्म दर व मृत्यु दर बराबर होती है तो इसे प्लेट्यु अवस्था कहते हैं।

जीव संख्या के वृद्धि के मुख्य प्रतिरूप जीव संख्या वृद्धि आकार है। समष्टि वृद्धि आकार के दो मूल प्रतिरूप हैं : (चित्र A व B)

(1) 'J' शक्ल का वृद्धि आकार, व

(2) 'S' शक्ल का वृद्धि आकार (चित्र A एवं B)।

1. **'J'** शक्ल का वृद्धि आकार – इस प्रकार के प्रतिरूप में समष्टि का घनत्व तीव्रता से चरघातांकी रूप (Exponential fashion) से वृद्धि करता है व अचानक पर्यावरणीय प्रतिरोध के कारण एकदम रूक होता है। 'J' आकार का वक्र यह दर्शाता है कि जैसे ही समष्टि एसिम्पटोट (Asymptote) अर्थात् जीव संख्या का उच्चतम आकार पर पहुंचती है तो एक सीमाकारी प्रभाव जैसे मौसम, स्थान आदि जीव संख्या को बढ़ने से रोक देता है (चित्र 2.4)। इस आकार को निम्नांकित समीकरण से दर्शाया जा सकता है –

$$\frac{\Delta N}{\Delta t} = rN \qquad \text{या} \qquad r = \frac{\Delta N}{\Delta t/N}$$

समीकरण में

r = वृद्धि दर N = संख्या

t = समय D = परिवर्तन

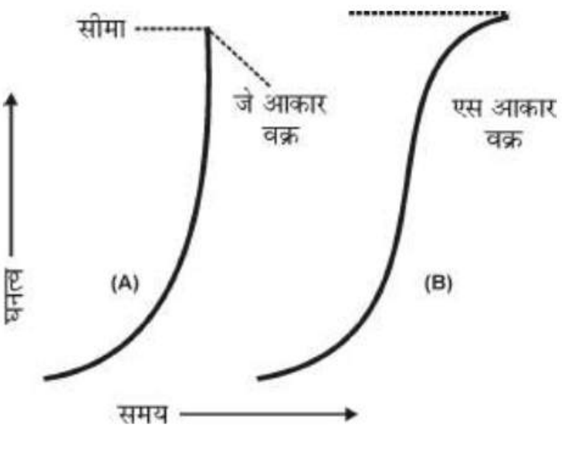

चित्र 2.4 : जीव संख्या वृद्धि आकार

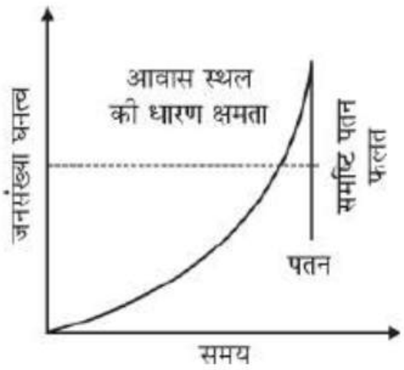

चित्र 2.5 : सैद्धान्तिक समष्टि वृद्धि व फलतः पतन **(Crash)** जबकि समष्टि आवास स्थल **(Habitat)** के धारण क्षमता **(Carrying capacity)** को पारकर जाती है।

2. **'S'** शक्ल या सिग्माइड (Sigmoid) वृद्धि आकार – इस प्रकार के वृद्धि आकार में वृद्धि दर आरम्भ में कम होती है, फिर बढ़ती है जब तक कि उच्चतम सीमा तक नहीं पहुंच जाती। जैसे–जैसे घनत्व बढ़ता जाता है, दर लगातार कम होती जाती है। जब जीव संख्या वहन क्षमता (Carrying capacity) पहुंचती है तो वक्र चपटा (Flattened) हो जाता है (चित्र 2.5)।

'S' आकृति या सिग्मोइड वृद्धि आकार निम्न समीकरण द्वारा दर्शाया जा सकता है–

$$\frac{\Delta N}{\Delta t} = \frac{rN(K-N)}{K}$$

समीकरण में 'K' वातावरणीय अवस्था में जीवसंख्या का उच्चतम संभव आकार है। इसे ऊपरी एसिम्पटोट (Upper asymptote) या वहन क्षमता (Carrying capacity) भी कहा जा सकता है। समीकरण मात्रा यह इंगित करता है कि समष्टि की वृद्धि दर जीव संख्या की विभव वृद्धि (Potential increase) के बराबर होती है।

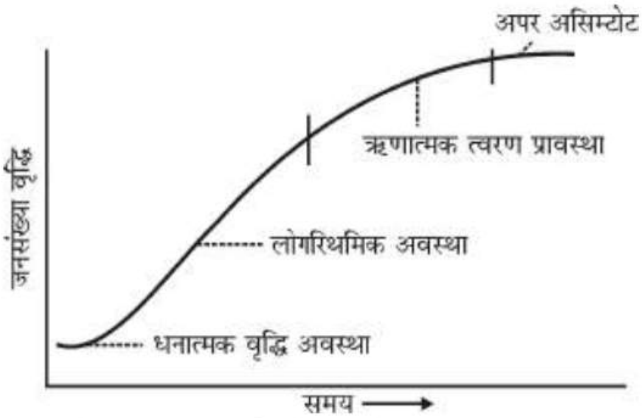

चित्र 2.6 : एक सैद्धान्तिक वृद्धि वक्र **(Growth curve)** समष्टि वृद्धि की विभिन्न प्रावस्थाओं को दर्शाते हुए

सिग्मोइड वक्र में वृद्धि प्रक्रम निम्नानुसार होता है – अनुकूल परिस्थितियों व क्षेत्र में व्याप्त समष्टि सर्वप्रथम शनैः–शनैः वृद्धि करती है। इसे धनात्मक त्वरण प्रावस्था (Positive acceleration phase) कहते हैं। तदुपरान्त बहुत ही तीव्र गति से वृद्धि होती है इसे लॉगेरिथमिक प्रावस्था (Logarithmic phase) कहते हैं (चित्र 2.6)।

अन्त में यह वृद्धि (धीमी हो जाती है जिसका कारण पर्यावरणीय प्रतिरोधकता (Environmental resistance) का बढ़ना होता है। इसे ऋणात्मक त्वरण प्रावस्था (Negative acceleration phase) कहते हैं। ऋणात्मक त्वरण प्रावस्था तब तक चलती है जब तक कि समष्टि की वृद्धि साम्यावस्था को प्राप्त नहीं कर लेती है। वृद्धि वक्र की ऊपरी सतह का स्तर जिसके परे कोई मुख्य वृद्धि नहीं होती, उसे ऊपरी एसिम्पटोट (Upper asymptote) कहते हैं। इसे वहन क्षमता (Carrying capacity) भी कहते हैं (चित्र 2.7)।

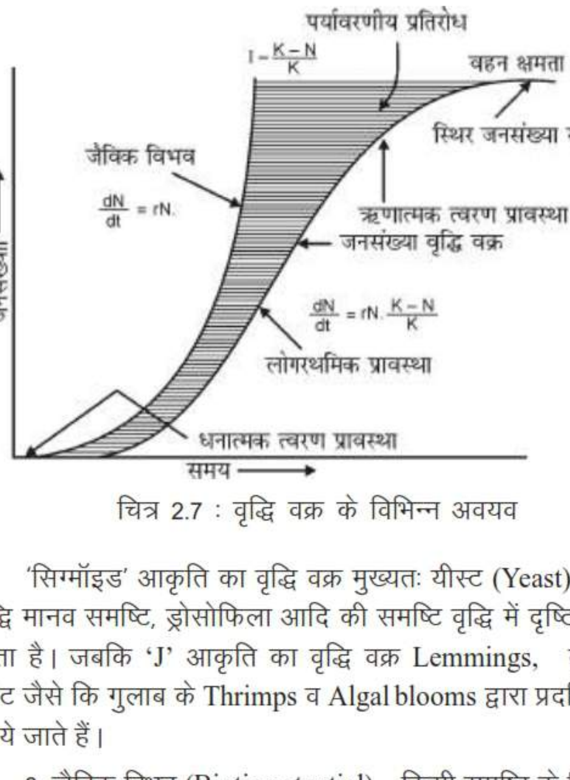

चित्र 2.7 : वृद्धि वक्र के विभिन्न अवयव

'सिग्मॉइड' आकृति का वृद्धि वक्र मुख्यतः यीस्ट (Yeast) की वृद्धि मानव समष्टि, ड्रोसोफिला आदि की समष्टि वृद्धि में दृष्टिगत होता है। जबकि 'J' आकृति का वृद्धि वक्र Lemmings, कुछ कीट जैसे कि गुलाब के Thrimps व Algal blooms द्वारा प्रदर्शित किये जाते हैं।

8. जैविक विभव (Biotic potential) – किसी समष्टि के लिए जब अनुकूल परिस्थितियां होती है तो इस दौरान इसमें अधिकतम जन्म दर तथा न्यूनतम मृत्यु दर होती है इन परिस्थितियों में जीवों की संख्या में बढ़ोतरी हेतु समष्टि में अन्तर्निहित क्षमता को जैविक विभव (Biotic potential) कहा जाता है। या दूसरे शब्दों में किसी जीव की सम्भावित अधिकतम जन्म दर को समष्टि का जैव विभव कहते हैं। हालांकि ऐसी आदर्श परिस्थितियां कभी भी स्थापित नहीं हो सकती क्योंकि इसमें परजीवियों, परभक्षियों, दुर्घटनाओं और परस्पर प्रतिस्पर्द्धा के कारण जीवों की अकाल मृत्यु हो जाती है फलतः मृत्यु दर बढ़ जाती है। मृत्यु के इन सभी कारणों को 'पर्यावरण सम्बन्धी प्रतिरोध' की अवधारणा के अन्तर्गत रखा जाता है।

किसी समष्टि में जीवों की संख्या में तीव्र वृद्धि होना या पतन की ओर बढ़ना समष्टि के जैविक विभव पर ही निर्भर करता है। पर्यावरणीय परिस्थितियां जब सर्वोत्तम होती है तब समष्टि अपने उच्चतम जैविक विभव का उपयोग कर तीव्र गति से समष्टि वर्ग को बड़ा कर लेती है। वहीं पर्यावरणीय परिस्थितियां प्रतिकूल होने पर समष्टि का आकार छोटा होने लगता है।

जैविक विभव या जीवीय क्षमता (Biotic potential) शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम चैपमैन द्वारा 1928 में किया गया था। उनके अनुसार, "जीवों में जीवित रहने तथा प्रजनन करके अपनी संख्या में वृद्धि करने का गुण अन्तर्निहित होता है तथा यह जीवीय क्रियाशीलता या जैविक विभव कहलाता है।"

किसी समष्टि को जीवों की संख्या में वृद्धि जैविक विभव तथा पर्यावरणीय प्रतिरोध (Environmental resistance) पर निर्भर करती है। अर्थात इन दोनों के मिले–जुले प्रभाव के द्वारा ही परिणामी रूप से समष्टि के आकार में वृद्धि होती है। किसी असीमित वातावरण में उच्चतम वृद्धि गति को जैविक विभव से प्रदर्शित किया जा सकता है –

$$r = \frac{\Delta N}{\Delta t / N}$$ या

जहाँ–	N = संख्या	t = समय
	r = वृद्धि दर	Δ = परिवर्तन।

समुदाय पारिस्थितिकी (Community Ecology)

पादप समुदाय की अवधारणा नई नहीं है। वनस्पति विज्ञान के जनक थियोफ्रेस्टस Theophrastus 370-285 B.C.) ने भिन्न–भिन्न पर्यावरणीय क्षेत्रों में विभिन्न प्रकार के पादप समुदायों के अस्तित्व का उल्लेख किया है। कार्ल मोबियस (Carl Mobius, 1880) ने बताया कि एक समुदाय में केवल पौधों का ही समुच्चय नहीं होता बल्कि इनके साथ प्राणियों का भी समुच्चय होता है। अतः ऐसे समुदाय को जैव समुदाय कहना चाहिये क्योंकि पादपों तथा प्राणियों का पृथक–पृथक अस्तित्व सम्भव नहीं है। क्लीमैन्ट्स (Clements) ने पादप समुदाय को एक निश्चित जातीय संगठन (Species composition) तथा जीवन इतिहास (Life history) वाले जीव की संज्ञा दी है। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि प्रकृति में विभिन्न जीव एक–दूसरे के साथ रहते हैं। पादपों एवं जन्तुओं की कुछ या अनेक जातियों को, जो पारस्परिक सहनशीलता तथा लाभदायक अन्योन्यक्रियाओं **(Beneficial interactions)** के साथ किसी प्राकृतिक क्षेत्र में साथ–साथ रहती हों, समुदाय कहते हैं, तथा इकोसिस्टम के जैविक घटक के पादप

भाग को पादप समुदाय कह सकते हैं।

पादप समुदाय के लक्षण (Characteristics of a Plant Community)

पादप समष्टि की भांति पादप समुदाय के भी अपने गुण होते हैं जो इसको बनाने वाली व्यष्टि जातियों में वैयक्तिक रूप से नहीं पाये जाते हैं। पादप समुदाय के लक्षण निम्न हैं–

(I) वृद्धि स्वरूप तथा संरचना (Growth form and structure) – किसी समुदाय का वर्णन उसके वृद्धि रूपों के अनुसार किया जाता है जैसे वृक्ष (Tree), क्षुप या झाड़ियां (Shrubs), शाक (Herbs), मोसेज (Mosses) आदि। प्रत्येक वृद्धि रूप में कई प्रकार के पौधे हो सकते हैं, जैसे मुख्य वृद्धि रूप वृक्ष में सदाबहार वृक्ष, बड़ी पत्तियों वाले वृक्ष या छोटी पत्तियों वाले वृक्ष। ये सभी वृद्धि रूप पादप समुदाय के संरचनात्मक ढांचे (Structural pattern) को निर्धारित करते हैं। विभिन्न वृद्धि रूपों की व्यवस्था के आधार पर पादप समुदाय (i) क्षैतिज परतन (Horizontal layering) तथा (ii) उर्ध्वाधर परतन (Vertical layering) दर्शाता है।

(ii) जाति विभिन्नता (Species diversity) – प्रत्येक पादप समुदाय विभिन्न जीवों (पादपों, जन्तुओं, सूक्ष्म जीवों आदि) से गठित होता है जो एक–दूसरे से वर्गिकीय दृष्टि से भिन्न होते हैं। इन सबमें प्रत्येक का अपना जीने का ढंग (Way of life) होता है तथा पादप समुदाय में इनकी अलग–अलग भूमिका होती है। प्रत्येक जाति की पादप समुदाय में भूमिका को 'निशे' (Niche) कहते हैं। किसी भी समुदाय में जातियों की संख्या तथा समष्टि बाहुल्य (Population abundance) इसके अत्यधिक महत्वपूर्ण भिन्नक (Variable) होते हैं।

(iii) पोषक संरचना या आत्म–निर्भरता (Trophic structure) – पोषण की दृष्टि से प्रत्येक समुदाय में स्वपोषी एवं विषमपोषी दोनों प्रकार के जीव सम्मिलित होते हैं। ये सभी मिलकर पादप समुदाय को आत्मनिर्भर तथा पूर्ण सन्तुलित बनाते हैं।

(iv) अनुक्रमण (Succession) – प्रत्येक समुदाय के विकास प्रक्रम का एक इतिहास होता है। सभी समुदायों में समय के साथ दिशात्मक परिवर्तन होते हैं, जिसके फलस्वरूप समुदाय परिवर्धित व परिवर्तित होते हैं। समुदाय का दिशात्मक परिवर्धन ही अनुक्रमण कहलाता है।

(v) प्रभाविता (Dominance) – एक पादप समुदाय की समस्त सदस्य जातियों के पौधे समान महत्ता वाले नहीं होते हैं। कुछ ही पादप, समुदाय की प्रकृति का निर्धारण करते हैं। ये पादप, समुदाय पर नियंत्रणकारी प्रभाव डालते हैं। इनको प्रभावी जातियां कहते हैं। इनका पादप समुदाय में पारस्परिक सम्बन्ध होता है। कुछ अधिक प्रभाव रखते हैं तो कुछ कम।

जीव समुदाय विवृत (Open) या सवृत (Closed) होते हैं। जिस जीव समुदाय में जीवों की सघनता नहीं होती तथा जिसमें समय–समय पर दूसरे जीव भी स्थापित हो सकते हैं, उसे विवृत समुदाय कहते हैं। जिस समुदाय में जीवों की सघनता होती है एवं नये जीवों का समावेश नहीं हो सकता उसे सवृत समुदाय कहते हैं।

उपरोक्त विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि जीव समुदाय आत्म–निर्भर, निश्चित संरचना वाला तथा अत्यधिक जाति विभिन्नता के कारण एक जटिल समुदाय है, जिसमें सभी जीव एक–दूसरे से सन्तुलित अवस्था में रहते हैं। जीव समुदाय में विभिन्न जीव एक ही आवास में रहते हैं। इनके बीज एवं बीजाणु दूर–दूर तक फैल सकते हैं, इस सम्भावना के बावजूद भी सभी जातियां सभी जगह नहीं पाई जाती है। प्रत्येक जाति की जैविक क्षमता (Potentiality), पर्यावरणीय स्थितियों को सहन करने के सहनशीलता क्षेत्र (Tolerance range) का निर्धारण करती है, जिसमें अमुक जाति सफलतापूर्वक उग सके। पर्यावरण के प्रसार (Range) को जिसे जीव सहन कर सके, पारिस्थितिक आयाम (Ecological amplitude) कहते हैं। अतः पादप समुदाय की प्रकृति, उसके जातीय प्रकार (Species content), पारिस्थितिकीय आयाम, जलवायु, मृदा तथा जैविक प्रभावों द्वारा निर्धारित होती हैं।

समुदाय में प्रत्येक जीव का अपना एक विशेष स्थान होता है। ग्रिनेल (Grinnel, 1917) के अनुसार किसी जाति या जीव द्वारा आवास स्थल के उस निश्चित भाग (सूक्ष्म आवास) को जिसे वह घेरे रहता है, उस जाति या जीव का कर्मताया निशे (Niche) कहा जाता है। निशे, कारकों का एक विशेष समुच्चय है जो किसी जाति के पर्यावरण का निर्धारण करता है। एल्टन (Elton, 1927) ने निशे शब्द का प्रयोग समुदाय के क्रियात्मक महत्त्व (Functional importance) को दर्शाने के लिये, इसको जाति के पोषण सम्बन्धों से जोड़ा। निशे को अधिक स्पष्ट करने के लिये यह कहना उपयुक्त है कि आवास (Habitat) किसी जीव का पता (Address) है तथा निशे उसका क्रियाशीलता (Activity) है। अतः एक समुदाय में विभिन्न जीव एक ही आवास में रहते हुए विभिन्न क्रियाशीलता के कारण साथ–साथ जीवनयापन करते हैं।

पादप समुदायों का संगठन, संरचना और विकास (Composition, Structure and Development of Plant Community)

हर समुदाय का अपना संगठन, संरचना व निश्चित विकास क्रम होता है।

1. संगठन (Composition) – समुदाय प्रायः बड़ा या छोटा होता है अर्थात् इसका कोई निश्चित क्षेत्र नहीं आता है। समुदाय का आकार (Size) चाहे कितना भी हो लेकिन उसमें विभिन्न

जातियों के जीवों का समावेश रहता है। एक पादप समुदाय में सभी पादप समान महत्ता के नहीं होते। संगठन के दृष्टिकोण से उन्हें दो प्रकार के पादपों में विभक्त किया जा सकता है–

(i) वे पादप जिनको नष्ट कर देने से पादप समुदाय के संगठन पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता है। (ii) वे पादप जिनको नष्ट कर देने पर पादप समुदाय का संगठन अत्यधिक प्रभावित होता है। दूसरी श्रेणी के पौधे अपनी वृद्धि एवं स्थूलता (Bulk) से आवास को रूपान्तरित (Modify) करके पादप समुदाय की दूसरी जातियों की वृद्धि पर नियंत्रण रखते हैं। इन पौधों को प्रभावी (Dominant) पौधे कहते हैं। समुदाय का नामकरण भी उसकी प्रभावी जातियों के आधार पर ही करते हैं। किसी भी समुदाय में प्रायः एक ही जाति के पौधे प्रभावी होते हैं। कभी–कभी एक से अधिक जातियां भी प्रभावी हो सकती है। अगर एक ही जाति के पादप प्रभावी हों तो उस पादप समुदाय को संसंघ (Consociation) व एक से अधिक प्रभावी जातियां हों तो उसे सहसंघ (Association) कहते हैं।

2. संरचना (Structure) – पादप समुदाय का निर्माण करने वाले विभिन्न पादप एक निश्चित व्यवस्था क्रम में व्यवस्थित होकर पादप समूह की निश्चित संरचना करते हैं। संरचना की दृष्टि से पादप समुदाय में जीवों का दो प्रकार का व्यवस्थाक्रम होता है–

(i) क्षैतिज रूप में (Horizontally) तथा (ii) ऊर्ध्वाधर रूप में (Vertically)

एक पादप समुदाय को क्षैतिज रूप से अनेक उप समुदायों में, जो समान जीवन रूपों (Life forms) तथा पारिस्थितिक संबंधों की इकाई होते हैं, विभक्त कर सकते हैं। यह क्षैतिजीय विभाजन (Horizontal division) पादप समुदाय में अनुक्षेत्र वर्गीकरण (Zonation) का निर्माण करता है। जैसे हिमालय पर्वत पर ऊंचाई के साथ वनस्पति के विभिन्न अनुक्षेत्र (Zone) पाये जाते हैं। घने वन (Dense forest) में भी इसी प्रकार के अनुक्षेत्र पाये जाते हैं। जीवों या पादपों के उदग्र वितरण (Vertical distribution) के अनुसार पादप समुदाय की रचना में स्तरीकरण (Startification) की प्रवृत्ति पाई जाती है। एक समुदाय के सभी पौधे समान ऊंचाई के नहीं होते हैं तथा न ही आवास स्थल में एक ही ऊंचाई पर स्थापित होते हैं। भिन्न–भिन्न जातियां भिन्न–भिन्न ऊंचाई की होती है तथा भिन्न–भिन्न ऊंचाई पर व्यवस्थित होती है। जैसे ऊंचे वृक्षों के नीचे झाड़ियां, झाड़ियों के स्तर के नीचे शाकीय पौधों का स्तर एवं सबसे नीचे मॉस, शैवाल, लाइकेन आदि का स्तर। अतः ऊंचाई के अनुसार या वृद्धि रूपों के अनुसार वनस्पति के भिन्न–भिन्न स्तर बन जाते हैं ताकि समुदाय के सभी सदस्य पादप प्रकाश एवं अन्य कारकों का अधिक से अधिक उपयोग कर सकें।

3. पादप समुदाय का उद्भव एवं विकास (Origin and development of plant community) – पादप समुदाय का उद्भव उस समय आरम्भ होता है जब पौधों के प्रवर्धक अंग, जेम्यूल (Gemmule) जैसे बीज, बीजाणु, स्कंध, मूल स्कंध (Root stock) आदि अनावृत क्षेत्र में प्रवेश (Invasion) करते हैं। इन जेम्यूल्स या प्रवर्ध्यों का गमन (Migration) वायु, जल या जन्तुओं द्वारा होता है। प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण इनमें से अधिकांश नष्ट हो जाते हैं तथा शेष अनुकूल समय में अंकुरण करते हैं। उनमें से कुछ छादाधार अवस्था (Prop stage) को प्राप्त होते हैं। प्रवासी नवागन्तुकों को पुरोगामी पादप (Pioneers) कहते हैं। ये नये आवास में जनन तथा प्रवर्धन करते हैं। इस प्रकार पुरोगामी जातियों द्वारा नये क्षेत्र का उपनिवेशन (Colonization) आरम्भ होता है। प्रवास के पश्चात् प्रवासी जातियों के नये क्षेत्र में स्थापन प्रक्रम को आस्थापन (Ecesis) कहते हैं। पादप समुदायों के विकास के लिये आस्थापन प्रक्रम अनिवार्य है। उपनिवेशन के पश्चात् धीरे–धीरे इन पौधों की संख्या बढ़ने से समूहन (Aggregation) प्रारम्भ होने लगता है। फलस्वरूप प्रकाश, स्थान व पोषक तत्त्वों के लिये प्रतिस्पर्धा (Competition) प्रारम्भ हो जाती है जिसके कारण केवल सबल पौधे ही जीवित रह पाते हैं। ये स्थाई पौधे आपस में तथा पर्यावरण से अभिक्रिया (Reaction) करते हैं। इस स्थाई पादप समुदाय में जलवायु के अनुसार अन्य पौधों का भी परिवर्धन हो जाता है। इस प्रकार समस्त वनस्पति में परिवर्तन होते रहते हैं तथा अन्त में वनस्पति तथा वहां की जलवायु के बीच एक सन्तुलन स्थापित हो जाता है। उन वनस्पतियों को जो जलवायु के अनुरूप होती हैं, चरम वनस्पति (Climax vegetation) कहते है। संक्षेप में पादप समुदाय का उद्भव एवं विकास क्रमिक रूप से प्रवेश या संक्रामण, उपनिवेशन, आस्थापन, समूहन, प्रतिस्पर्धा आदि द्वारा सम्पन्न होता है जिसके दौरान पुरोगामी पादप नवीन स्थल पर चरम वनस्पति का विकास करते हैं।

पादप समुदाय संरचना के अध्ययन के लक्षण (Characters for Study of a Plant Community)

किसी भी पादप समुदाय की संरचना के अध्ययन के लिए उस समुदाय के कई पहलुओं (Aspects) का अध्ययन किया जाता है। इनका दो श्रेणियों में अध्ययन कर सकते हैं –

(I) विश्लेषणात्मक लक्षण (Analytical characters)

(II) संश्लेषणात्मक लक्षण (Synthetic characters)

(I) विश्लेषणात्मक लक्षण (Analytical Characters) – विश्लेषणात्मक लक्षण दो प्रकार के होते हैं –

(अ) गुणात्मक लक्षण (Qualitative characters)

(ब) परिमाणात्मक लक्षण (Quantitative characters)

(अ) गुणात्मक लक्षण (Qualitative Characters)

समुदाय के इन लक्षणों का केवल शाब्दिक वर्णन ही सम्भव

है, परिमाणात्मक मापन सम्भव नहीं है। पादप समुदाय के गुणात्मक लक्षण निम्नलिखित हैं –

(i) रूपाकृति (Physiognomy)

(ii) वनस्पति का स्तरण (Stratification of vegetation)

(iii) जीवन–शक्ति (Vitality)

(iv) घटना विज्ञान या आवर्तिता (Phenology or periodicity)

(v) बाहुल्य (Abundance)

;vi) सामाजिकता (Sociability)

(vii) जीवन रूप (Life forms)

(viii) पर्ण आमाप (Size of leaves)

(i) रूपाकृति (Physiognomy) – यह वनस्पति का बाह्य प्रगटन (External appearance) है जो पादप समुदाय की प्रभावी जातियों के वृद्धि रूपों द्वारा निर्धारित किया जाता है। स्वरूप को एक शब्द द्वारा व्यक्त किया जा सकता है। जैसे एक समुदाय जिसमें झाड़ियों के साथ विशाल वृक्ष प्रभावी जातियां हो तो प्रगटन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि यह वन है। इसी प्रकार प्रगटन (Appearance) के आधार पर पादप समुदाय के स्वरूप को घासस्थल (Grassland), मरुस्थल (Desert) आदि शब्दों से व्यक्त किया जा सकता है।

(ii) वनस्पति का स्तरण (Stratification of vegetation) – स्तरण एक व्यवस्था (Way) है जिसमें विभिन्न जातियों के पादप उपलब्ध भौतिक तथा कार्यिकी सुविधाओं या परिस्थितियों का अधिकतम उपयोग करने के लिए उदग्र परतों में व्यवस्थित रहते हैं। पादप समुदाय में सभी पौधे समान ऊंचाई के नहीं होते। अतः ऊंचाई की दृष्टि से भिन्न–भिन्न पौधे भिन्न–भिन्न स्तरों में व्यवस्थित रहते हैं। उदाहरणार्थ – किसी घने वन में पादपों के कई स्पष्ट स्तर पाये जाते हैं जैसे सर्वाधिक ऊंचाई वाले वृक्षों का स्तर, झाड़ियों का स्तर, शाकीय पौधों का स्तर तथा भूमि पर मॉस, शैवाल, लाइकेन आदि का स्तर। ये स्तर एक निश्चित क्रम में पाये जाते हैं। वनस्पति का यह स्तरीकरण प्रकाश, वायु, नमी व अन्य पर्यावरणीय कारकों का अधिक से अधिक उपयोग करने के लिये होता है। कई स्तरों वाले वनों को बहुस्तरीय वन (Multistoreyed forest) कहते हैं।

(iii) जीवनशक्ति (Vitality) – पौधे की सामान्य वृद्धि एवं जनन क्षमता को जीवन शक्ति कहते हैं जो किसी जाति के सफलतापूर्वक जीवित रहने के लिये महत्त्वपूर्ण है। जीवनशक्ति के फलस्वरूप ही समुदाय में, पादप अपना प्रमुख स्थान बना सकता है। जीवनशक्ति, जाति (Species) के भार पर निर्भर करती है। पौधों में स्तम्भ की लम्बाई, मूल की लम्बाई, पर्णों की संख्या, पुष्प, फलों तथा बीजों की संख्या तथा भार आदि गुण जीवनशक्ति का निर्धारण करते हैं। कुछ पौधे अच्छी जीवनशक्ति के कारण ही पादप समुदाय में प्रभावी होते हैं। डॉबनमायर (Daubenmire, 1968) ने जीवनशक्ति के आधार पर पौधों के निम्नलिखित समूह बनाये हैं–

V_1 – पौधे अंकुरण के पश्चात् शीघ्र मर जाते हैं।

V_2 – पौधे अंकुरण के पश्चात् कुछ वृद्धि करते हैं लेकिन प्रजनन नहीं कर सकते।

V_3 – पौधे जो केवल कायिक जनन ही करते हैं।

V_4 – पौधे जिनमें लैंगिक जनन तो होता है किन्तु बहुत कम।

V_5 – पौधे जो लैंगिक प्रजनन कर वृद्धि करते हैं।

[यहां V = जीवनशक्ति (Vitality) है।]

(iv) घटना विज्ञान या आवर्तिता (Phenology or periodicity) – प्रत्येक जाति के जीवन इतिहास में कुछ महत्वपूर्ण घटनाएं होती हैं जैसे बीजांकुरण, पर्णों का झड़ना, फूलों का आना, फलों का बनना, बीजों का प्रकीर्णन आदि। इन घटनाओं के समय व प्रक्रम के अध्ययन को, घटना विज्ञान (Phenology) कहते हैं।

(v) बाहुल्य (Abundance) – पादप समुदाय में बाहुल्य पादपों की सघनता से सम्बन्धित है लेकिन बाहुल्य को परिमाणात्मक रूप से व्यक्त नहीं कर सकते हैं। पौधे किसी भी आवास में समान रूप से वितरित नहीं रहते, बल्कि छोटे–छोटे समूहों में जो संख्या में भिन्न होते हैं, पाये जाते हैं, अर्थात् एक क्षेत्र विशेष के भिन्न–भिन्न स्थानों पर पौधों की संख्या भिन्न–भिन्न होती है। पौधों की संख्या के आधार पर बाहुल्य को पांच अनुमानित वर्गों में विभक्त किया जाता है।

(क) बहुत दुर्लभ (Very rare)

(ख) दुर्लभ (Rare)

(ग) सामान्य (Common)

(घ) अधिक सामान्य (Frequent)

(ङ) बहुत अधिक सामान्य (Much frequent)

(vi) सामाजिकता (Sociability) – सामाजिकता पौधों के आपसी संबंधों (निकटता) की सूचक होती है। समुदाय में पौधे छोटे–बड़े समूहों में रहते हैं। कुछ जातियों के पादप तो पास–पास उगकर सघन समष्टि (Thick population) का निर्माण करते हैं। लेकिन अन्य पौधों के घने समूह में उगने से उनमें विभिन्न पर्यावरणीय कारकों के लिये स्पर्धा उत्पन्न हो जाती है जिससे ये या तो दुर्बल या नष्ट हो जाते हैं। समुदाय में सामाजिकता से विभिन्न जातियों के क्षैतिज वितरण का ज्ञान होता है। ब्राऊन ब्लेंकट (Braun Blanquet, 1932) ने सामाजिकता को पांच श्रेणियों में वर्गीकृत किया है, जहां S= सामाजिकता (Sociability)।

S_1 – अकेले पाये जाने वाले पौधे।

S_2 – कुछ पौधों का समूह।

S_3 – छोटे–छोटे चप्पों या क्षेत्रों में वितरित पौधे।

S_4 – बड़े–बड़े चप्पों में वितरित पौधे।

S_5 – बहुत बड़े क्षेत्रों में फैले एक ही प्रकार के पौधे।

सामाजिकता को परिमाणात्मक रूप में निम्नलिखित प्रकार से व्यक्त किया जाता है –

$$\text{सामाजिकता} = \frac{\text{सघनता (Density)}}{\text{आवृत्ति (Frequency)}} \times 100$$

(vii) जीवन रूप (Life forms) – स्वीडन के पारिस्थितिकविज्ञ राउनकियर (Raunkiaer, 1934) ने स्पष्ट किया कि पादपों में उत्तरजीविता बीजों के अतिरिक्त, चिरकालिक अंगों (Perennating organs) जैसे कायिक कलिकाओं, कंदों, प्रकंदों आदि के द्वारा होती है। ये चिरकालिक अंग पादपों को जलवायु की विषम परिस्थितियों के प्रति सुरक्षित कर जीवित रखते हैं। उनके अनुसार चिरकालिक अंगों की ऊंचाई पौधों की आदिम (Primitive) अथवा विकसित (Advanced) प्रकृति तथा जलवायु के लिये उनकी अनुकूलता को व्यक्त करती है।

राउनकियर ने चिरकालिक अंगों की विविधता के आधार पर पादप समुदाय के पौधों को निम्न पांच जीवन रूपों में बांटा हैं (चित्र 2.8) –

1. उन्मृदोद्‌भिद या फैनीरोफाइट्स (Phanerophytes) – ये अधिकतर वृक्ष हैं, इनमें चिरकालिक अंग इनके प्ररोह पर ऊंचाई पर लगे रहते हैं जिन पर कभी–कभी शल्की आवरण पाया जाता है। उष्ण कटिबन्धों में इनकी बाहुल्यता पाई जाती है तथा ध्रुवीय क्षेत्रों (Polar regions) में इनकी संख्या कम होती है। ये शल्क युक्त या शल्क विहीन कलिकाओं वाले सदाबहार पौधे या शल्क युक्त कलिका वाले पर्णपाती (Deciduous) भी हो सकते हैं। ऊंचाई के आधार पर ये चार प्रकार के होते हैं।

(अ) गुरु उन्मृदोद्‌भिद (Megaphanerophyte) – 30 मीटर से अधिक लम्बाई के।

(ब) सम–उन्मृदोद्‌भिद (Mesophanerophytes) – 8 से 30 मीटर लम्बाई वाले।

(स) लघु उन्मृदोद्‌भिद (Microphanerophytes) – 2 मीटर से 8 मीटर ऊंचे।

(द) वामन उन्मृदोद्‌भिद (Nanophanerophytes) – 2 मीटर से कम ऊंचे।

2. भूतलोद्‌भिद (Chamaephytes) – ये वृक्ष रूप पौधे ठण्डे क्षेत्रों एवं अधिक ऊंचाई वाले स्थानों पर पाये जाते हैं। इन पौधों में

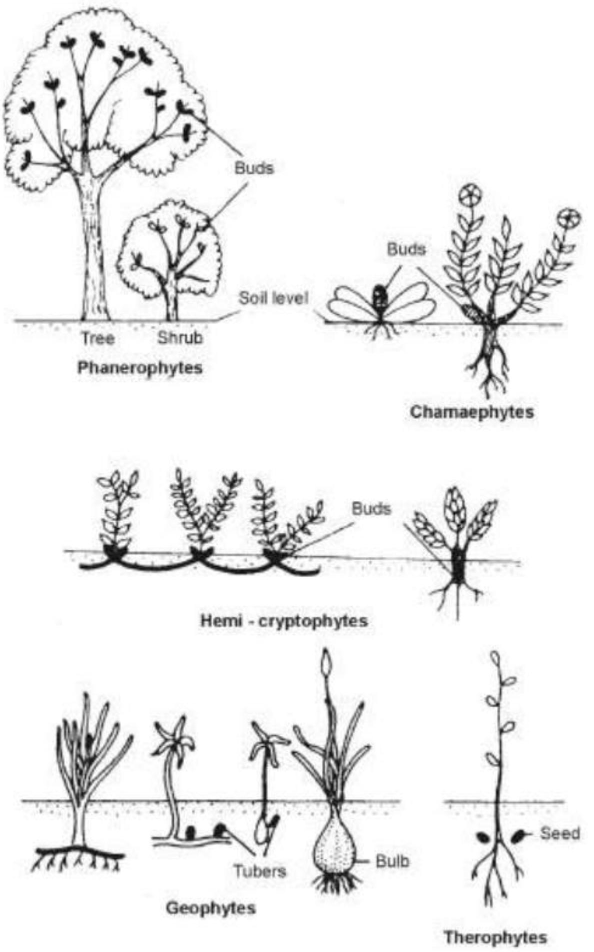

चित्र 2.8 : राउनकियर के अनुसार जीवन रूपों में चिरकालिक अंगों की स्थिति

चिरकालिक अंग भूमि की सतह पर या भूमि के बहुत निकट पाये जाते हैं। इनको भी चार समूहों में विभक्त किया गया है –

(अ) उपक्षुपिल भूतलोद्‌भिद (Subfruitcose chamae phytes) – इनमें प्ररोह सीधे तथा चिरकालिक अंग आधार पर होते हैं।

(ब) सक्रिय भूतलोद्‌भिद (Active chamaephytes) – इनमें प्ररोह क्षेतिज तथा चिरकालिक अंग पर्व सन्धियों पर पाये जाते हैं।

(स) निश्चेष्ट भूतलोद्‌भिद (Passive chamaephytes) – इनमें प्ररोह सीधे तथा चिरकालिक कलियां क्षेतिज प्ररोह पर होती है।

(द) तल्प भूतलोद्‌भिद (Cushion chamaephytes) – इनमें प्ररोह छोटे होते हैं।

3. हेमीक्रिप्टोफाइट या अर्धगूदोद्‌भिद (Hemicrypto phytes) – ये शाकीय पौधे होते हैं। इनमें चिरकालिक अंग भूमि

की सतह पर पाये जाते हैं। ये पादप ठण्डे क्षेत्रों में पाये जाते हैं इनके वायव भाग विषम परिस्थितियों में सूख जाते हैं।

4. गूदोद्भिद या क्रिप्टोफाइट (Cryptophytes) – इनमें चिरकालिक कलिकायें (अंग) पूर्ण रूप से भूमि की सतह के नीचे या जल निमग्न होती है। अतः इन पादपों को जियोफाइट (Geophyte) भी कहते हैं। जलोद्भिद एवं मूल परजीवी इसी श्रेणी में आते हैं। इनको तीन उप–समूहों में विभाजित किया गया है –

(अ) भूगर्भोद्भिद (Geophytes)

(ब) लवणमृदोद्भिद (Halophytes)

(स) जलोद्भिद (Hydrophytes)

5. ऋतुद्भिद (Therophytes) – ये एकवर्षी पादप होते हैं जिनका बीज से बीज तक का अपना जीवन–चक्र कुछ सप्ताह से कुछ माह तक होता है। ये पर्यावरण की विषम परिस्थितियों को बीजों के रूप में रहकर व्यतीत करते हैं।

ब्राऊन ब्लेंकट (Braun Blanquet, 1954) ने राउनकियर (Raunkiaer) के उपर्युक्त 5 जीवन रूपों में कुछ परिवर्तन कर इनके दस समूह बनाये हैं।

राउनकियर (Raunkiaer, 1936) ने पत्तियों के आधार पर जीवन रूपों का एक अन्य वर्गीकरण प्रस्तावित किया है। प्रत्येक वर्ग की पत्ती का आकार अपने पीछे वाले वर्ग की पत्तियों के आकार से 9 गुणा अधिक होती है।

पर्ण (पत्ती)	पर्ण आकार
(अ) गुरुपर्ण (Megaphyll)	164025 वर्ग मिमी से बड़े
(ब) वृहत पर्ण (Macrophyll)	18225-164025 वर्ग मिमी
(स) मध्यम पर्ण (Mesophyll)	2025-18225 वर्ग मिमी
(द) लघु पर्ण (Microphyll)	225-2025 वर्ग मिमी
(य) वामन पर्ण (Nanophyll)	25-225 वर्ग मिमी
(र) तनु पर्ण (Leptophyll)	25 वर्ग मिमी से छोटी

किसी पादप समुदाय के उच्च पादपों की सभी जातियां एक या दूसरे जीवन रूप में वर्गीकृत की जा सकती है। एक समुदाय में संख्या या प्रतिशत के रूप में विभिन्न जातियों के जीवन रूपों का अनुपात जैविक स्पैक्ट्रम (Biological spectrum) कहलाता है। चूंकि जीवन रूप पौधों के चारों ओर के पर्यावरण से सम्बन्धित होते हैं, अतः जैविक स्पैक्ट्रम वहां के उपस्थित पर्यावरण (Prevailing environment) का सूचक होता है। जैसे ऋतुद्भिद पादपों (थीरोफाइट्स) की उच्च प्रतिशतता लम्बे शुष्क मौसम का संकेत करते हैं, जबकि विभिन्न क्षेत्रों में समान जैविक स्पैक्ट्रम वहां जलवायु की समान परिस्थितियों का संकेत करता है। पत्तियों के आकार को जलवायु परिस्थितियों से सह–सम्बन्धित किया गया है। आधुनिक समय में इस प्रकार का अध्ययन वृक्षों के सक्रिय उत्पादक क्षेत्रों (Active productive area) से सहसम्बन्धित किया जाता है।

(ब) परिमाणात्मक लक्षण (Quantitative Characters)

पादप समुदाय के वे लक्षण जिनका मापन सम्भव हो तथा जिनको परिमाणात्मक रूप में व्यक्त किया जा सके, परिमाणात्मक लक्षण कहलाते हैं। पादप आवृत्ति (Frequency), पादप सघनता (Density), बाहुल्य (Abundance) तथा आवरण एवं आधारीय क्षेत्र (Cover and basal area) आदि पादप समुदाय के परिमाणात्मक लक्षण कहे जाते हैं।

पादप समुदाय के अध्ययन की विशेष विधियों जैसे प्रतिचयन तकनीकों (Sampling techniques) द्वारा परिमाणात्मक लक्षणों का अध्ययन किया जाता है, जबकि गुणात्मक लक्षणों के अध्ययन में नमूना इकाई (Sampling unit) की आवश्यकता नहीं होती।

यूरोप के पारिस्थितिकविज्ञों विशेषकर ब्राउन ब्लेंकट (Braun Blanquet) के नेतृत्व में पादप समुदाय के वर्णन तथा वर्गीकरण की एक प्रणाली (System) विकसित की गई है। पारिस्थितिकी के इस पहलू या प्रणाली को पादप सामाजिक विज्ञान (Phytosociology) कहते हैं। पादप समुदायों के पादप समाज विज्ञानीय अध्ययनों के लिये प्रतिचयन या नमूना इकाइयां काम में लेते हैं अर्थात् पादप समुदाय के परिमाणात्मक गुणों के अध्ययन के लिए प्रतिचयन या नमूना इकाइयों की आवश्यकता होती है। पादप सामाजिक विज्ञान विधियों (Phytosociological methods) में प्रतिचयन इकाइयों के 3 रूपों (Forms) का उपयोग किया जाता है। ये हैं – क्षेत्र (Area), कतार (Line) तथा बिन्दु (Point)। क्षेत्र तथा कतार प्रतिचयन इकाइयों में प्रतिचयन के लिए एक निश्चित क्षेत्र होता है परन्तु सघन वनस्पति वाले भागों में एक निश्चित क्षेत्र लेने में कठिनाई आती है अतः ऐसे स्थानों पर बिन्दु (Point) प्रतिचयन इकाई ली जाती है। प्रतिचयन इकाई की प्रकृति के आधार पर पादप समुदाय के अध्ययन की 3 प्रमुख विधियां हैं –

(क) वर्ग जालिका विधि या क्वाड्रेट विधि (Quadrate methods) – इस विधि में नमूना इकाई एक निश्चित क्षेत्र में होता है जो एक वर्ग (Square), आयत (Rectangular) या गोला (Circle) हो सकता है।

किसी भी निश्चित आकार के क्षेत्रफल अथवा प्रतिचयन इकाई (Sampling unit) जिसकी सभी भुजाएं समान हो को वर्ग जालिका (Quadrat) कहा जाता है। क्वाड्रेट का क्षेत्रफल व आकार पादप समुदाय के प्रकार व क्षेत्र पर निर्भर करता है। सामान्यतः इसका क्षेत्रफल एक वर्ग मीटर रखा जाता है। एक वर्ग मीटर क्षेत्रफल का क्वाड्रेट बनाने हेतु मीटर स्केल से माप कर भूमि में एक–एक मीटर की दूरी पर चार कीलों को एक वर्ग के चार कोनों पर गाड़ दिया

जाता है। चारों कीलों के मध्य डोरी बांध कर एक वर्ग मीटर क्षेत्रफल का क्वाड्रेट तैयार कर लिया जाता है। आजकल इस हेतु पहले से तैयार लोहे के फ्रेम भी काम में लिए जाते हैं। उचित पैमाने के अनुसार पेपर पर क्वाड्रेट रेखांकित कर उसमें आने वाली पादप जातियों को चिन्हित कर विभिन्न आंकड़े इकट्ठे कर लिए जाते हैं। इन आंकड़ों का विश्लेषण कर सम्बन्धित स्थल पर उपस्थित विभिन्न पादप जातियों की आवृत्ति (Frequency), सघनता (Density) एवं बाहुल्यता (Abundance) ज्ञात कर ली जाती है।

(ख) ट्रान्सेक्ट विधि (Transect method) – इस विधि में प्रतिचयन इकाई एक निश्चित लम्बाई की कतार (Line) होती है।

अध्ययन की इस विधि में क्षेत्र के एक सिरे से दूसरे सिरे तक एक सीधी डोरी अथवा रेखा खींच दी जाती है। इस लाइन पर स्थित पौधों की विभिन्न जातियों, उनकी आवृत्ति व संख्या ज्ञात कर ली जाती है। इस प्रकार उसी क्षेत्र में अलग–अलग 10–15 ट्रांससेक्ट बराबर दूरी पर लगा कर आंकड़े नोट कर लिए जाते हैं। इस विधि द्वारा किसी संगठन की परिधि से केन्द्र तक पौधों की रचनाकृति और संगठन में परिवर्तन को भी ज्ञात किया जा सकता है।

प्रकृति में सभी पादप सूक्ष्म या व हद् समूह में उगते हैं। एक ही जाति के पादपों के समूह को समष्टि या जनसंख्या (Population) कहते हैं। दो या अधिक प्रकार की समष्टियों या जातियों के समूह को समुदाय (Community) कहते हैं। अतः पादप समुदाय पादपों का एक ऐसा समूह है जिसमें एक से अधिक जातियों के पादप होते हैं। एक समुदाय की पादप जातियां वर्गिकी के दृष्टिकोण (Taxonomically) से भिन्न–भिन्न होती हैं लेकिन पारिस्थितिकी के दृष्टिकोण से ये एक दूसरे से सम्बन्ध रखते हुए सन्तुलित रहती है।

(ग) बिन्दु या क्षेत्र रहित विधि (Point method or ploties method) – यहां प्रतिचयन इकाई एक बिन्दु होता है।

प्रतिचयन इकाई में आने वाले पौधों के आंकड़े प्राप्त कर पादप समुदाय में सघनता, बाहुल्य, प्रधानता आदि ज्ञात की जाती है।

परिमाणात्मक लक्षणों की विवेचना

(i) पादप आवृत्ति (Plant frequency) – आवृत्ति पादप समुदाय में जाति विशेष के परिक्षेपण या बिखराव (Dispersion) की मात्राा को इंगित करती है। किसी समुदाय में एक जाति के पौधों का समान या असमान वितरण का सूचक आवृत्ति ही होती है। वितरण में भिन्नता पर्यावरणीय भौतिक या जैविक कारकों के कारण हो सकती है। किसी पादप समुदाय के क्षेत्रा में उपयुक्त संख्या में क्वाड्रेट्स डालकर उसमें अमुक जाति की प्रतिशत उपस्थिति ज्ञात की जाती है। किसी समुदाय में एक जाति के प्रतिशत उपस्थिति

$$\text{आवृत्ति (प्रतिशत)} = \frac{\text{क्वाड्रेट्स की संख्या जिनमें वह जाति उपस्थित है}}{\text{अध्ययन किये गये कुल क्वाड्रेट्स की संख्या}} \times 100$$

ज्ञात की जाती है। किसी समुदाय में एक जाति के प्रतिशत परिक्षेपण को उसकी आवृत्ति कहते हैं।

उपरोक्त विधि से प्रत्येक जाति की आवृत्ति ज्ञात की जा सकती है। जब एक जाति, समुदाय के पूरे क्षेत्र में बाहुल्यता से बिखरी हुई है तो वह सभी क्वाड्रेट्स में उपस्थिति होंगी। अतः इसकी आवृत्ति 100 प्रतिशत होगी अर्थात् किसी जाति की उच्च आवृत्ति इसके एक समान परिक्षेपण का द्योतक है। राउनकियर (Raunkiaer, 1934) ने पादप समुदाय में विभिन्न जातियों के पादपों को पांच आवृत्ति श्रेणियों में विभक्त किया है –

आवृत्ति	आवृत्ति %
A	1-20%
B	20-40%
C	40-60%
D	60-80%
E	80-100%

बाद में राउनकियर (Raunkiaer) ने अपने आठ हजार क्वाड्रेट्स के अध्ययनों के आधार पर आवृत्ति के नियम का प्रतिपादन किया। आवृत्ति श्रेणी A में जातियां की संख्या B श्रेणी से अधिक होगी, B श्रेणी में जातियों की संख्या C श्रेणी से अधिक होगी, C, D के बराबर, कम या अधिक हो सकती है तथा D, E से कम होगी। इसको इस प्रकार भी लिखा जा सकता है –

$$A > B > C \gtreqless D < E$$

अर्थात् क्षीण बिखराव या आवृत्ति वाली जातियों की संख्या, उच्च आवृत्ति वाली जातियों की संख्या की अपेक्षा अधिक होती है। किसी जाति की आवृत्ति का, दूसरी जातियों की आवृत्ति से तुलना करने पर आपेक्षित आवृत्ति प्राप्त होती है जिसे निम्नलिखित विधि से ज्ञात कर सकते हैं –

$$\text{आपेक्षिक आवृत्ति} = \frac{\text{एक जाति की आवृत्ति}}{\text{समस्त जातियों की कुल आवृत्ति}} \times 100$$

$$= \frac{\text{Number of Occurrence of a Species}}{\text{Number of Occurrence of all the Species}} \times 100$$

(ii) बाहुल्यता (Abundance) – किसी समुदाय के प्रत्येक इकाई क्षेत्र में उपस्थित विभिन्न जातियों के सदस्यों की संख्या को बाहुल्यता कहते हैं। किसी क्षेत्र में यादृच्छिक (Random) रूप से डाली गई सभी प्रतिचयन इकाइयों या क्वाड्रेट्स में विभिन्न जातियों के सदस्यों की संख्या ज्ञात करके निम्नलिखित सूत्र से बाहुल्यता निकालते हैं –

$$\text{बाहुल्यता} = \frac{\text{अध्ययन किये गये समस्त क्वाड्रेट्स में जाति के पौधों की कुल संख्या}}{\text{कुल क्वाड्रेट्स की संख्या जिसमें वह पाई जाती है}} \times 100$$

बाहुल्यता किसी भी जाति की संख्यात्मक सामर्थ्य (Numerical strength) का सम्पूर्ण चित्र प्रस्तुत नहीं करती है क्योंकि इसके आकलन में केवल उन्हीं क्वाड्रेट्स को सम्मिलित किया जाता है जिनमें वह जाति उपस्थित है। अध्ययन किये गये सभी क्वाड्रेट्स को सम्मिलित नहीं किया जाता है।

(iii) सघनता (Density) – सघनता किसी जाति की संख्यात्मक प्रबलता का व्यतिकरण (Expression) है। पादप समुदाय के प्रति इकाई क्षेत्रा में पाये जाने वाले एक जाति के पादपों की संख्या को सघनता कहते हैं। इसे निम्नलिखित प्रकार से ज्ञात किया जाता है –

$$\text{सघनता} = \frac{\text{अध्ययन किये गये क्वाड्रेट्स में जाति के पौधों की कुल संख्या}}{\text{अध्ययन किये गये कुल क्वाड्रेट्स की संख्या}}$$

आपेक्षिक सघनता में एक जाति की सघनता का पादप समुदाय की सभी जातियों की सघनता के साथ तुलनात्मक अध्ययन होता है।

सघनता के आधार पर एक जाति, प्रभावी (Dominant), बाहुल्य (Abundance), आवृत्त (Frequent), कभी–कभी (Occasional) अथवा विरल (Rare) हो सकती है।

(iv) आवरण तथा आधार क्षेत्र (Cover and basal area) – परिमाणात्मक लक्षण जैसे आवृत्ति, सघनता आदि किसी जाति के वितरण के बारे में पूरी जानकारी नहीं देते हैं। चूंकि विभिन्न जातियां वृद्धि रूपों में भिन्न होती हैं अतः ये लक्षण दूसरे गुणों जैसे आवरण एवं आधारीय क्षेत्र आदि से जुड़े होते हैं (चित्र 2.9)।

आवरण (Cover) – पौधे द्वारा घेरे गये क्षेत्र को आवरण कहते हैं। यह क्षेत्र पर्णिल आवरण (Herbage cover) या आधार क्षेत्र का आवरण (Basal area cover) हो सकता है। पर्णिल आवरण से अर्थ है पादप के वायव भागों द्वारा घेरा हुआ भूमि का क्षेत्र। पर्णिल आवरण पर्णिल उपलब्धता का एक अच्छा मापन है। इसका आकलन चार्ट क्वाड्रेट या पोइन्ट फ्रेम (Point frame) द्वारा किया जाता है।

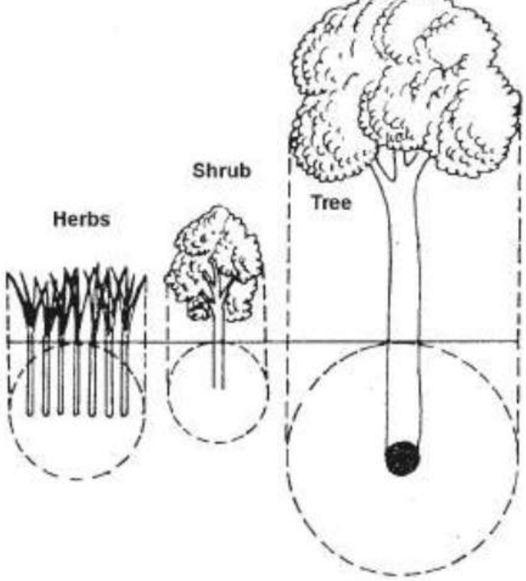

चित्र 2.9 : विभिन्न जीवन रूपों में पर्णिल आवरण व आधारीय क्षेत्र में सम्बन्ध

आधारीय क्षेत्र (Basal area) – आधारीय क्षेत्र से अभिप्राय तने द्वारा वेधित या प्रवेश किये गये भूमि क्षेत्र से है। पर्णिल आवरण के अतिरिक्त तना भी भूमि सतह पर कुछ स्थान को घेरता है अर्थात् तना व मूल सन्धि द्वारा घेरा गया भूमि क्षेत्र, आधारीय क्षेत्र कहलाता है। आधार क्षेत्र के अध्ययन में घासें तथा भूस्पर्शी पौधे कुछ कठिनाईयां उपस्थित करते हैं। ऐसी अवस्था में पौधे के तने का आधार क्षेत्र, मूल के समीप से नापा जाता है। अन्य शाकीय पौधों में भूमि से 2.5 सेमी. ऊपर तथा वृक्षों में भूमि से 1.5 मीटर ऊपर तने के व्यास से ज्ञात किया जाता है।

पर्णिल आवरण के आधार पर पादप जातियां पांच श्रेणियों में विभक्त की गई है –

"A" 5 प्रतिशत से कम पर्णिल आवरण वाली जातियां,

"B" 5–25 प्रतिशत पर्णिल आवरण वाली जातियां,

"C" 26–50 प्रतिशत पर्णिल आवरण वाली जातियां,

"D" 51–75 प्रतिशत पर्णिल आवरण वाली जातियां,

"E" 76–100 प्रतिशत पर्णिल आवरण वाली जातियां।

अधिक पर्णिल आवरण वाले पादप प्रकाश को अधिक रोकते

हैं फलस्वरूप घनी छाया हो जाती है जो सघन वन में सतही पादप जात (Flora) के पादपों के वितरण को प्रभावित करते हैं। आधारीय क्षेत्र कुछ सीमा तक पौधे की आयु के साथ बढ़ता है जो प्ररोह में शुष्क पदार्थ (Dry matter) के संग्रह (Accumulation) को प्रकट करता है।

(v) प्रमुखता (Dominance) – वैसे तो प्रमुखता या प्रधानता संश्लेषणात्मक लक्षण हैं (Anson and Churchil, 1961)। लेकिन डॉबनमायर (Daubenmire) ने इसे विश्लेषणात्मक लक्षण माना है तथा इसकी छः श्रेणियां बनाई हैं। जीवों की संख्या से जाति के बारे में सही जानकारी नहीं मिल पाती है जैसे किसी शाकीय समुदाय में केवल एक झाड़ी या वृक्ष का संख्या के दृष्टिकोण से कोई महत्त्व नहीं होता लेकिन यदि पादप द्वारा घेरे गये क्षेत्र या जैव भार पर ध्यान दिया जाये तो उसी शाकीय समुदाय में एक झाड़ी या वृक्ष की भी महत्ता हो जाती है। अतः प्रधानता में आवरण को एक महत्त्वपूर्ण लक्षण के रूप में सम्मिलित किया गया है। इस प्रकार शाकीय समुदाय में एक वृक्ष ही काफी बड़े क्षेत्र को घेर सकता है तथा उसमें जैव भार भी अधिक हो सकता है।

(II) **संश्लेषणात्मक लक्षण** (Synthetic Characters) – किसी समुदाय के परिमाणात्मक एवं गुणात्मक लक्षणों को मिलाकर (Computing) उनके निष्कर्षों के आधार पर जो लक्षण आते हैं या जो लक्षण बनते हैं, उन्हें संश्लेषणात्मक लक्षण कहते हैं। मुख्य संश्लेषणात्मक लक्षण निम्नलिखित हैं –

(i) उपस्थिति तथा स्थिरता (Presence and constance) – इनका सम्बन्ध पादप आवृत्ति से है। ये पादप समुदाय में किसी जाति विशेष के सदस्यों की उपस्थिति की सीमा (Extent of occurrence) को दर्शाते हैं। यदि किसी जाति की आवृत्ति (उस जाति के पौधों का बार–बार पाया जाना) अधिक हो तो वह समुदाय में अधिक उपस्थित एवं स्थायी मानी जाती है। पादपों को प्रतिशत आवृत्ति के आधार पर निम्नलिखित समूहों में वर्गीकृत किया गया है –

(क) दुर्लभ (Rare) – अध्ययन किये गये क्वाड्रेट्स में 1–20 प्रतिशत उपस्थिति।

(ख) विरल (Occasional) – 21–40 प्रतिशत उपस्थित।

(ग) प्रायः उपस्थित (Often present) – 41–60 प्रतिशत उपस्थित।

(घ) अधिकांश उपस्थित (Mostly present) – 61–80 प्रतिशत उपस्थित।

(ङ) सदैव उपस्थित (Constantly present) – 80–100 प्रतिशत उपस्थित।

किसी जाति की उपस्थिति या स्थिरता का उपयोग दो समुदायों की तुलना में किया जाता है।

(ii) वासनिष्ठा या संलग्नता (Fidelity) – किसी जाति के वितरण की वह सीमा या मात्रा जिसमें वह जाति अपने वितरण में एक ही समुदाय तक सीमित होती है, वासनिष्ठा कहलाती है। कुछ जातियां इतनी सामान्य होती हैं कि प्रायः सभी समुदायों में उपस्थित होती है, लेकिन कुछ जातियां विशेष समुदायों में ही पाई जाती है। इस प्रकार के सम्बन्ध को वासनिष्ठा द्वारा व्यक्त किया जाता है। जो जाति, वितरण में जितनी सीमित होती है उसकी वासनिष्ठा उतनी ही उच्च होती है। अतः जिस जाति की वासनिष्ठा न्यून (Minimum) होती है, वह अनेक समुदायों में पाई जाती है तथा जिसकी वासनिष्ठा अधिक होती है, वह किसी समुदाय विशेष में ही पाई जाती है। वासनिष्ठा का सम्बन्ध उस जाति के पारिस्थितिकीय आयाम (Ecological amplitude) से है। जिस जाति का पारिस्थितिकीय आयाम या सहनशीलता की सीमा अधिक होगी, उसकी वासनिष्ठा कम होगी तथा जिसका पारिस्थितिकीय आयाम कम है, उसकी वासनिष्ठा अधिक होगी, अर्थात् वितरण सीमित होगा। विभिन्न जातियों को वासनिष्ठा के आधार पर निम्नलिखित श्रेणियों में विभक्त किया गया है – (जहां F = fidelity) है।

(अ) $\mathbf{F_1}$ – अजनबी (Stranger) – संयोगवश पाई जाने वाली जाति।

(ब) $\mathbf{F_2}$ – उदासीन (Indifferent) – ये जातियां किसी भी समुदाय में पाई जा सकती है, लेकिन इनका किसी विशेष से सम्बन्ध स्थापित नहीं किया जा सकता है।

(स) $\mathbf{F_3}$ – वरीयता वाली जातियां (Preferential) – वे जातियां जो अनेक समुदायों में पाई जाती हैं, लेकिन कुछ समुदायों में बहुलता से मिलती हैं।

(द) $\mathbf{F_4}$ – चयनात्मक जातियां (Selective) – जो जातियां कुछ विशेष समुदायों में ही पाई जाती हैं, लेकिन कभी–कभी अन्य समुदायों में भी मिल सकती हैं।

(य) $\mathbf{F_5}$ – विशिष्ट (Exclusive) – ये केवल विशेष समुदाय में ही पाई जाती हैं।

(iii) प्रमुखता (Dominance) – इसका वर्णन परिमाणात्मक लक्षणों में किया जा चुका है, अतः यहां इसे संश्लेषित प्रकार (Synthetic form) या इसके गणितीय पक्ष को प्रस्तुत किया जा रहा है। सघनता, आवृत्ति तथा आवरण के सापेक्ष मानों के आधार पर कर्टिस तथा मैकइन्तोष (Curtis and Mc-Intosh, 1950) ने महत्त्वशील मान घातांक (Importance value index) IVI का विचार प्रस्तावित किया। समुदाय में किसी जाति का महत्त्वशील मान घातांक (IVI) उसकी सापेक्ष महत्ता की जानकारी देता है। किसी भी समुदाय में महत्त्वशील मान घातांक का कुल योग 300 से अधिक नहीं हो सकता, क्योंकि यह सघनता, आवृत्ति तथा आवरण के सापेक्ष मानों का योग है।

पादप अनुक्रमण (Plant Succession)

किसी स्थान को यदि पूरी तरह से वनस्पति विहिन कर दिया जाए व तत्पश्चात यहां किसी प्रकार की कोई मानव या वन्य जीवों की अन्तःक्रिया नहीं हो तो यहां क्रमशः पुनः नई पादप जातियां विकसित होने लगती है व एक समय ऐसा आता है जब यहां कई प्रकार की विकसित वनस्पति विकसित हो जाती है। अतः किसी वनस्पति विहिन स्थान पर धीरे–धीरे पादप समुदाय के विकसित होने को पादप अनुक्रमण (Plant succession) कहा जाता है। पादप अनुक्रमण शब्द विवर एवं क्लिमेंट्स (Weaver and Clements, 1977) ने दिया था, जबकि इसका सर्वप्रथम अध्ययन किंग (King, 1685) द्वारा किया गया था। ओडम (1983) के अनुसार, ''अनुक्रमण किसी इकाई क्षेत्र के जीव समुदाय में क्रमशः परिवर्तन है।''

दूसरे शब्दों में अनुक्रमण एक जटिल प्रक्रिया है जो शुरू होती है, विकसित होती है और एक उच्चतम स्तर तक पहुंच कर स्थिर हो जाती है।

इस प्रकार विकसित हुआ समुदाय उच्चतम स्तर पर पूर्णतः स्थिर, स्वपोषित व स्वचालित होता है।

नग्न स्थान पर सबसे पहले विकसित होने वाली वनस्पति को अग्रणी (Pioneer), अनुक्रमण की सभी अवस्थाओं को सीरल अवस्थाएं (Seral stages) एवं सम्पूर्ण प्रक्रिया को सिअर (Sere) कहा जाता है।

अनुक्रमण के प्रकार (Types of Succession)

नग्न क्षेत्र के प्रकार के आधार पर पादप अनुक्रमण तीन उपभागों में विभेदित किया गया है–

(i) जलक्रमक (Hydrosere) – जलीय आवास में अनुक्रमण का शुरू होना हाइड्रार्क (Hydrach) तथा अनुक्रमण की सम्पूर्ण प्रक्रिया जलक्रमक (Hydrosere) कहलाती है, उदाहरणतः तालाब, झील या कीचड़ में अनुक्रमण।

(ii) मरुक्रमक (Xerosere) – मरु या शुष्क क्षेत्र में अनुक्रमण की सम्पूर्ण प्रक्रिया को मरुक्रमक (Xerosere) कहा जाता है, यह पुनः दो प्रकार का होता है–

(a) लिथोसियर – नग्न चट्टानों पर शुरू होने वाला अनुक्रमण।

(b) सेमोसियर – रेतीले नग्न मरु क्षेत्र में होने वाला अनुक्रमण।

एक अन्य आधार पर अनुक्रमण को निम्न दो वर्गों में वर्गीकृत किया गया है –

(i) प्राथमिक अनुक्रमण (Primary succession) – ऐसा स्थान जहां पहले कभी वनस्पति नहीं थी, पर पादप अनुक्रमण होना प्राथमिक अनुक्रमण की श्रेणी में आता है। नग्न चट्टानों, रेतीले टीलों, ज्वालामुखी से निकली राख, लावा वाले क्षेत्रों में अनुक्रमण इसके उदाहरण है।

(ii) द्वितीयक अनुक्रमण (Secondary succession) – ऐसे क्षेत्र जहां पूर्व में वनस्पति हुआ करती थी लेकिन बाढ़, अग्नि अथवा कटाई या अन्य प्राकृतिक आपदा के कारण पूरी तरह से नष्ट हो गई, उस स्थान पर पुनः पादप अनुक्रमण होना द्वितीयक अनुक्रमण कहलाता है।

अनुक्रमण की सामान्य क्रिया (General Process of Succession)

किसी वनस्पति विहिन नग्न स्थान पर अनुक्रमण निम्न अवस्थाओं से गुजरता है –

1. अनाच्छादन (Nudation) – किसी क्षेत्र में प्राकृतिक या मानवीय कारकों के कारण सम्पूर्ण वनस्पति का नष्ट हो जाना अनाच्छादन कहलाता है। अनुक्रमण की प्रारम्भिक अवस्था है।

2. आगमन (Invasion) – अनाच्छादित स्थान पर अन्य हरित क्षेत्रों से बीज, बीजाणु या अन्य जननक्षम पादप भाग का आना आगमन कहलाता है। यहां आने वाली सबसे पहली वनस्पति पुरोगामी या अग्रणी (Pioneer) कहलाती है।

इस अवस्था को निम्न चरणों में वर्गीकृत किया गया है–

(a) प्रवास (Migration) – आक्रमण के प्रथम चरण में बीज बीजाणु या कायिक जननक्षम पादप भाग नग्न स्थान पर प्रवास करता है। प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण कई संवेदनशील बीज आदि नष्ट हो जाते है, लेकिन कुछ प्रतिरोधी व सहनशील जननक्षम पादप भाग वायु, जल, जीव–जन्तु या मानव द्वारा अन्य स्थानों पर प्रकीर्णित होते हैं। यहां ये अनुकूल अवस्था पाकर अंकुरित हो जाते हैं।

(b) आस्थापन (Ecesis) – प्रवास के पश्चात जातियां नए क्षेत्र में स्थापित होती है, यह आस्थापन (Ecesis) कहलाता है। स्थापित होने के लिए प्रवासी जाति को कम से कम एक जीवन चक्र उस क्षेत्र में पूरा करना होता है। आस्थापन के पश्चात प्रजातियां उपनिवेशन प्रारम्भ करती है।

(c) समूहन (Aggregation) – आस्थापित जातियां उपनिवेशन के बाद उस क्षेत्र में अपना समूह विकसित करती है इसे समूहन (Aggregation) कहा जाता है।

3. स्पर्धा एवं प्रतिक्रिया (Competition and reaction) – समूहन हो जाने पर पादपों में पोषकों, प्रकाश व स्थान के लिए परस्पर प्रतिस्पर्द्धा (Competition) प्रारम्भ हो जाती है। यह स्पर्द्धा आन्तरजातीय (Intraspecific) तथा अन्तरजातीय (Interspecific) हो सकती है। स्पर्द्धा के फलस्वरूप केवल सबल पौधे ही जीवित रह पाते हैं तथा जनन करते हैं। जिस प्रकार

वातावरण पादपों को प्रभावित करता है, उसी प्रकार पादप भी वातावरण से अन्तःक्रिया करते हैं जिससे पर्यावरण में परिवर्तन होते हैं। पादपों की पर्यावरण के साथ यह अन्तःक्रिया प्रतिक्रिया (Reaction) कहलाती है। पौधों के मृत सड़े–गले भागों से ह्यूमस का निर्माण होता है। इसी प्रकार पौधों की छाया के कारण कुछ सूक्ष्म जलवायवी (Micro-climatic) परितर्वन होने लगते हैं। परिवर्तित जलवायु प्रारम्भिक पुरोगामियों के लिए कम अनुकूल तथा नए आगमनकारों के लिए अधिक अनुकूल बन जाती है। इस प्रकार पुरोगामी जातियों का स्थान नई जातियां ले लेती है। इस कारण शाकीय पौधों का स्थान क्षुप तथा क्षुपों का स्थान वृक्ष लेने लगते हैं।

4. स्थायित्व और चरम वनस्पति (Stability and climax vegetation) – ऊपर वर्णित क्रम के अनुसार क्षेत्र में विकसित वनस्पति आपस में एवं वातावरण से अन्तःक्रिया करती है, इन अन्तःक्रिया के कारण वातावरण में परिवर्तन होता है लेकिन धीरे–धीरे वातावरण में स्थिरता आने लगती है। इस स्थिर अवस्था में वनस्पति जीवन का अन्तिम रूप शाकीय, क्षुपीय या वृक्षीय जलवायु द्वारा निर्धारित होता है। वनस्पति का अन्तिम प्रारूप लगभग स्थायी तथा जलवायु से पूर्णरूपेण संतुलित होता है। यह प्रारूप आवास की विशिष्ट जलवायु के अनुसार उच्चतम होता है तथा इसे चरम वनस्पति (Climax vegetation) कहते हैं। चरम वनस्पति उस जलवायु के लिए पूरी तरह से अनुकूलित होती है। जिससे समुदाय में स्थायित्व आ जाता है तथा वनस्पति में तब तक कोई परिवर्तन नहीं होते जब तक कि कोई बाह्य कारक इस सम्पूर्ण प्रक्रम को प्रभावित न करे। इसके अलावा प्रकाश, स्थान की आर्द्रता, पोषक तत्वों का चक्रीकरण आदि सभी पर्यावरणीय कारक भी पूर्णतः पादप समुदाय के नियंत्रण में होते हैं। इसके कारण नई जातियों के प्रवेश की सम्भावना बहुत कम रह जाती है।

यहां अनुक्रमण के दो महत्त्वपूर्ण प्रकारों का विस्तृत विवरण दिया जा रहा है–

मरुक्रमक (Xerosere)

जल विहिन परिस्थितियों में होने वाले अनुक्रमण को मरुक्रमक (Xerosere) कहा जाता है। यहां पर चट्टानों पर होने वाले अनुक्रमण का विवरण दिया जा रहा है –

1. पुरोगामी अवस्था (Pioneer stage) या पर्पटी लाइकेन अवस्था (Crustose lichen stage) – चट्टानों पर जल विहिन मरु परिस्थितियां पाई जाती है। यहां पर खनिज लवण संचित करने के लिए भी कोई प्रक्रिया या दशा नहीं होती है। चट्टानें जब तेज सूर्य के प्रकाश में देर तक रहती है तो इनका तापमान भी बहुत अधिक बढ़ जाता है ऐसी परिस्थितियों एवं आवास में केवल पर्पटी लाइकेन ही पुरोगामी की भांति उत्पन्न हो सकती है। लाइकेन के बीजाणु, सोरिडिया या टुकड़े हवा के साथ उड़कर इन चट्टानों पर आते हैं। यहां स्थापित होकर पर्पटी लाइकेन कार्बनिक अम्ल का उत्पादन करती है। जिससे चट्टानों की ऊपरी सतह का क्षरण होता है।

$$CO_2 + H_2O \rightleftharpoons H_2CO_3$$

इस प्रकार की पर्पटी लाइकेन के उदाहरण है ग्रेफिस, लिसीडिया, लकोनोसा, राइनेडिना, राइजोकार्पोन आदि।

2. पर्णिल लाइकेन अवस्था (Foliose lichen stage) – पर्णिला लाइकेन वह लाइकेन होती है, जो आधार (Substratum) पर केवल एक बिन्दु पर लगे रहते हैं। इस अवस्था में चट्टानों की सतह पर कुछ मिट्टी भी बन जाती है। धीरे–धीरे पर्पटी लाइकेन को पर्णिल लाइकेन पूरी तरह से ढक लेती है जिससे पर्पटी लाइकेन को सूर्य का प्रकाश पर्याप्त मात्राा में नहीं मिल पाता है व यह पूरी तरह से पर्णिल लाइकेन द्वारा प्रतिस्थापित कर दी जाती है। मिट्टी व पर्णिल लाइकेन के संयुक्त प्रभाव से अब अधिक मात्रा में वर्षा जल का ठहराव चट्टानों पर होता है, हवा के साथ बहकर आए मिट्टी के कण यहां जीवन को और अधिक अनुकूल बनाते हैं। जीवित एवं मृत लाइकेन निरन्तर कार्बनिक अम्लों का उत्पादन करती है जिससे चट्टानों का अपघटन होता रहता है। पर्णिल लाइकेन के उदाहरण – डरमेटोकारपीन, पारमेलिया, अम्बिलीकेरिया आदि।

3. मॉस अवस्था (Moss stage) – मिट्टी की पर्याप्त मात्राा की उपलब्धता पर चट्टानों पर मॉस उगने प्रारम्भ हो जाते हैं। ये मरुद्भिदी मॉस हवा के साथ उड़ कर आते हैं। चट्टानों की मिट्टी व पर्णिल लाइकेन द्वारा इन्हें रोक लिया जाता है। मॉस के जनन क्षम भागों से राइजोइड्स निकल आते हैं जो पर्णिल लाइकेन से पानी एवं पोषक तत्वों के लिए प्रतिस्पर्द्धा (Compete) करते हैं। मॉस के अलावा इन परिस्थितियों में क्षुपिल लाइकेन जैसे असनिया एवं क्लैडोनिया भी उत्पन्न होते हैं। ये क्षुपिल लाइकेन व मॉस पर्णिल लाइकेन को ढक लेते हैं, जिससे ये नष्ट होकर मिट्टी में परिवर्तित होने लगती है। यहां उत्पन्न होने वाली मॉस के उदाहरण है – ग्रिम्मीया, टोर्टुला, पोलीट्राइकम आदि।

4. शाक अवस्था (Herbaceous stage) – मॉस आदि के वर्षों तक नष्ट होने एवं उत्पन्न होने से चट्टान पर एक इंच या इससे भी मोटी मिट्टी की तह बन जाती है जहां अब शाक उत्पन्न होने लगती है। यहां सबसे पहले घास या एकवर्षीय शाक अंकुरित होते हैं। चट्टानों की खांचों में शाक की जड़ें फैल जाती है जो चट्टानों के अपघटन को और तीव्र कर देती है। उत्तरोत्तर रूप से मिट्टी की मात्रा, आर्द्रता, ह्यूमस आदि की मात्रा बढ़ने लगती है एवं छाया के कारण वाष्पन कम होने लगता है। ऐसी अवस्था में कम लम्बी जड़ों वाली घास उगती हैं जैसे– अरिस्टिडा, पोआ आदि।

5. क्षुप अवस्था (Shrub stage) – निरन्तर बढ़ती मिट्टी की परतों में अब मरुद्भिदी क्षुपों का अंकुरण होता है। इनकी छाया में

शॉक व अन्य पादप मृत हो अपघटित हो जाते हैं। क्षुप की पत्तियों आदि से भी कार्बनिक लवणों की मात्रा मिट्टी में बढ़ती जाती है। फलतः यह मिट्टी पादपों में वृद्धि हेतु क्रमशः अनुकूलित हो जाती है।

6. चरम वनस्पति (Climax forest) – सर्वप्रथम चरम वनस्पति के अन्तर्गत धीमी वृद्धि वाले पेड़ उगते हैं। जिनके मृत भागों के गिरने से, सड़न से, ह्यूमस की मात्रा बढ़ती है फलतः मृदा की उर्वरा क्षमता और बढ़ जाती है। बड़े पेड़ों की छाया में छोटे समोद्भिद पनपने लगते हैं। ये समस्त वनस्पति यहां उपलब्ध वातावरण व आवास हेतु पूर्णतः अनुकूलित होते हैं। अन्त में वन विकसित हो जाते हैं।

जलक्रमक (Hydrosere)

जलक्रमक को समझने के लिए किसी तालाब या झील का उदाहरण सबसे उपयुक्त है, क्योंकि यहां जल की गहराई मध्य में अधिकतम होती है तथा किनारे की तरफ क्रमशः कम होती जाती है तथा इसी दिशा में उत्तरोत्तर चरम वनस्पति का विकास होता है। इस विकास को निम्न प्रावस्थाओं में समझा जा सकता है (चित्र 2.10) –

1. पादपप्लावक अवस्था (Phytoplankton stage) – किसी तालाब या झील में व्युत्पन्न होने वाले संचक्र में बसाने का कार्य कुछ पादप प्लवक (Phytoplanktons) द्वारा होता है अतः ये पुरोगामी (Pioneer) पादप समूह होते हैं। प्लवक के अलावा पुरोगामी के रूप में तालाबों में नीलहरित शैवाल (Blue green algae), हरे शैवाल (Green algae), डायेटम्स (Diatoms) और जीवाणु (Bacteria) आदि भी उत्पन्न होते हैं। ये समस्त पुरोगामी ज्यादातर जलीय सतह पर या सतह के नजदीक ही पाए जाते हैं, जल की गहराई में इनका अस्तित्व नहीं देखा जाता है।

2. मूलीय निमग्न अवस्था (Rooted submerged stage) – पादपप्लावकों के अपघटन से तालाब जल एक मुलायम कीचड़ में परिवर्तित हो जाता है जिसमें प्रकाश भेदन आसानी से हो जाता है। इस स्थान पर जड़ युक्त निमग्न जलोद्भिद (Submerged hydrophytes) उग आते हैं जैसे इलोडिया (*Elodea*), हाइड्रिला (*Hydrilla*), पोटैमोजेटॉन (*Potamogeton*), वैलिसिनेरिया (*Vallisneria*), यूट्रिकुलेरिया (*Utricularia*) आदि। इन पादपों की मृत्यु व अपघटन से उत्तरोत्तर तल में नए स्तर का होता रहता है फलतः तालाब छिछला होने लगता है।

3. मूलीय प्लावी अवस्था (Rooted floating stage) – इन जलोद्भिदों में जड़ें पाई जाती है तथा ये सतह पर प्लावी पत्तियों द्वारा तैरते रहते हैं। इस अवस्था में जल की गहराई 2 से 5 फीट होती है। ऐसे पादपों के उदाहरण है नीलम्बो (*Nelumbo*), निम्फिया (*Nymphaea*), लिम्नैन्थिमम (*Limnanthemum*), ट्रापा

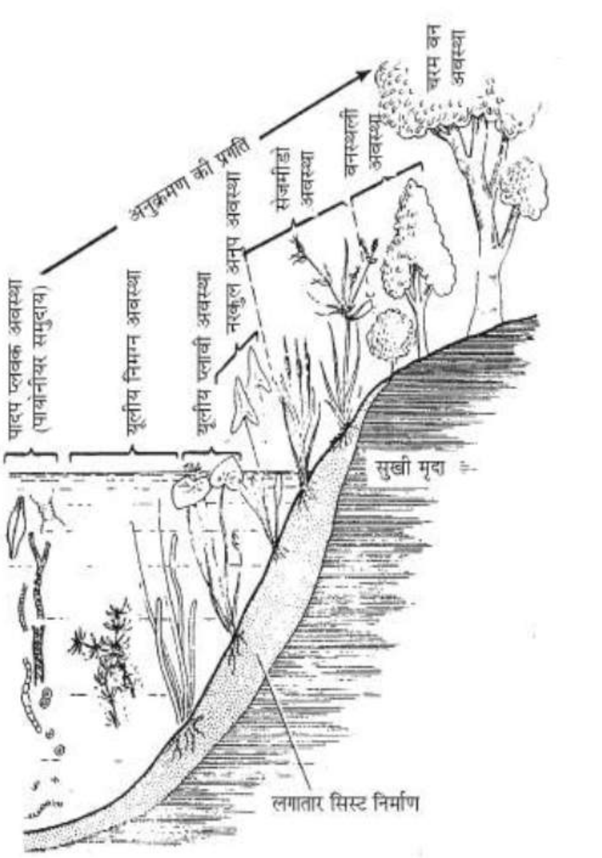

चित्र 2.10 : ताल में प्रारम्भ हुए जलक्रमक की भिन्न अवस्थाओं पर प्रकट होती है भिन्न पादप समुदायों को दर्शाता चित्र

(*Trapa*), मोनोकोरिया (*Monochoria*) इत्यादि। जल में लवण की मात्रा अधिक होने पर कुछ स्वतन्त्र रूप से तैरने वाली जातियां जैसे एजोला (*Azolla*), लैम्ना (*Lemna*), वॉलफिया (*Wolffia*), पिस्टिया (*Pistia*), साल्विनिया (Salvinia) आदि भी विकसित हो जाती है। जो जल्दी ही पुनः विलुप्त हो जाती है।

4. नरकुल अनूप अवस्था (Reed swamp stage) – मृदा की बढ़ती स्तरों के कारण जल स्तर अत्यधिक घट जाता है अतः यहां विकसित होने वाली वनस्पति की जड़ें तो पानी से युक्त मृदा में रहती है जबकि तने का अधिकतर भाग वायव स्थिति में रहता है अतः इस अवस्था में उभयचर (Amphibious) प्रकार की वनस्पति का विकास होता है। उदाहरणतः सिरपस (*Scirpus*), टाइफा (*Typha*), सैजिटेरिया (*Sagittaria*), फ्रैग्माइट्स (*Phragmites*) इत्यादि। इनमें राइजोम (Rhizome) अत्यधिक विकसित प्रकार के होते हैं तथा ये घनी वनस्पति को पैदा करने वाले होते हैं।

5. सैज मीडो अवस्था (Sedge meadow stage) – पानी की

निरन्तर घटती मात्रा एवं मिट्टी की बढ़ती हुई मात्रा के कारण अब इन परिस्थितियों में जलीय पादप वृद्धि नहीं कर पाते हैं। अतः यहां केरेक्स (*Carex*), जंकस (*Juncus*), साइप्रस (*Cyperus*) आदि साईपरेसी व ग्रेमीनी कुल के पादपों का विकास होता है। इन परिस्थितियों में पादपों द्वारा अत्यधिक जल अवशोषण एवं वाष्पोत्सर्जन होता है। जिससे मृदा में जल की मात्रा निरन्तर कम होने लगती है फलतः ये परिस्थितियां क्षुप व वृक्षों के विकास के लिए अनुकूल होने लगती है।

6. वनस्थली अवस्था (Woodland stage) – बढ़ती शुष्क अवस्थाओं में झुप व वृक्षों की प्रजातियां विकास करती है इनकी छाया में छोटी प्रजातियां मृत होकर ह्यूमस बना लेती है। फलतः मिट्टी की उर्वरकता भी बढ़ती है।

7. चरम वन (Climax forest) – चरम वनस्पति में उष्णकटिबन्धीय जलवायु में भारी वर्षा के कारण उष्टकटिबन्धीय वन विकसित होते हैं। जबकि शीतोष्ण भागों में एल्मस (*Almus*), एसर (*Acer*) और क्यूरकस (*Quercus*) के मिश्रित वन विकसित होते हैं। मध्यम श्रेणी के वर्षा वाले भागों में उष्णकटिबन्धीय पर्णपाती वन विकसित होते हैं।

इस प्रकार एक जल मग्न तालाब या झील के स्थान पर क्रमशः चरम वनस्पति का विकास हो जाता है। चरम वनस्पति का प्रकार वातावरण के प्रकार पर निर्भर करता है।

जैव आक्रमण – जब कोई किसी अन्य क्षेत्र की प्रजाति, किसी दूसरे क्षेत्र में जाए एवं वहां वृद्धि करने लगे तथा इससे वहां की किसी प्रजाति को कोई प्रतिकूलता महसूस करने लगे तो वह जैव आक्रमण कहलाती है।

उदाहरण के लिए– यूक्लेप्टिस या सफेदा का वृक्ष भारतीय मूल का नहीं है एवं यहां पनप कर भूमि के जल स्तर को हानि पहुंचा रहा है। वि. बबूल भारतीय मूल का पादप नहीं, यह यहां पर पनप करके अन्य भारतियों पादपों की प्रजातियों को पनपने से रोक रहा है। गाजर घास भी विदेशी मूल का पादप है तथा यहां पनप कर अन्य प्रजातियों के पादपों को हानि पहुंचाता है तथा अन्य जीवों को भी रोगी करता है।

इसी तरह जलकुम्भी भी विदेशी मूल का पादप है जो भारतीय जल स्रोतों को नुकसान पहुंचाता है। पर्यावरण एवं प्रकृति प्रेमियों के साथ–साथ सर्वसामान्य व्यक्तियों को इनसे भारतीय भूमि को मुक्त करने का प्रयास करना चाहिए।

महत्वपूर्ण बिन्दु

1. जनसंख्या – किसी विशेष समय और स्थान पर प्रजाति विशेष के समूह को वहां की जनसंख्या कहते हैं।
2. जन्म दर – किसी समष्टि में इकाई समय में जन्मे नये सदस्यों की संख्या जन्म दर कहलाती है।
3. मृत्यु दर – इकाई समय में किसी समष्टि में मरने वाले जीवों की संख्या मृत्यु दर कहलाती है।
4. आयु संरचना – किसी भी जनसंख्या में विभिन्न आयु वर्ग के सदस्यों की तुलनात्मक प्रचुरता को जीव की आयु संरचना कहते हैं।
5. आयु स्तूप – किसी भी जीव प्रजाति में उसकी आयु के अनेक समूहों के अनुपात को रेखागणितीय रूप से दिखाने वाले मॉडल को आयु स्तूप कहते हैं।
6. वाइटल इन्डेक्स – किसी भी स्थान पर जन्म व मृत्यु दर का अनुपात वाइटल इन्डेक्स कहलाता है।
7. आक्रमण – बाहर से अनेक नई जातियों का अनुक्रमण के क्षेत्र में अनाधिकार प्रवेश आक्रमण कहलाता है।
8. बहिप्रवास – जब किसी स्थान से जीवों की एक संख्या एक स्थान से दूसरे स्थान पर चली जाए तो वह बहिप्रवास कहलाती है।
9. अन्तःप्रवास – किसी एक स्थान पर एक जीव जाति के आगमन को अन्तःप्रवास कहते हैं।
10. अनुक्रमण – किसी इकाई क्षेत्र के जीव समुदाय में क्रमशः परिवर्तन अनुक्रमण कहलाता है।
11. जलक्रमक – जलीय आवास में अनुक्रमण की सम्पूर्ण प्रक्रिया जलक्रमक कहलाती है, उदाहरण तालाब, झील।
12. मरुक्रमक – शुष्क क्षेत्र में अनुक्रमण की सम्पूर्ण प्रक्रिया को मरुक्रमक कहा जाता है।
13. प्राथमिक अनुक्रमण – ऐसा स्थान जहां पहले कभी वनस्पति नहीं थी वहां पर पादप अनुक्रमण होना प्राथमिक अनुक्रमण कहलाता है।
14. द्वितीयक अनुक्रमण – ऐसे क्षेत्र जहां पर पूर्व में वनस्पति हुआ करती थी लेकिन प्राकृतिक आपदा या वन कटाई आदि से पूरी तरह नष्ट हो गई। उस स्थान पर पादप अनुक्रमण होना द्वितीयक अनुक्रमण कहलाता है।
15. जैव आक्रमण – जब कोई किसी अन्य क्षेत्र की प्रजाति, किसी दूसरे क्षेत्र में जाए एवं वहां वृद्धि करने लगे तथा इससे वहां की किसी प्रजाति को कोई प्रतिकूलता महसूस करने लगे तो वह जैव आक्रमण कहलाती है।

अभ्यासार्थ प्रश्न

बहुचयनात्मक प्रश्न (Multiple Choice Questions)

1. किसी समय में किसी क्षेत्र में किसी जाति की जन्म दर मापने का सरल सूत्र है –

(अ) $N = \frac{B}{t}$ (ब) $N = \frac{t}{B}$

(स) $t = \frac{B}{N}$ (द) $N = t + B$

2. किसी समय में किसी क्षेत्र में किसी प्रजाति की मृत्यु दर मापने का सरल सूत्र है –

(अ) मृत्यु दर= $\frac{t}{D}$ (ब) मृत्यु दर= $\frac{D}{t}$

(स) मृत्यु दर = D+t (द) मृत्यु दर = D×t

3. किसी जीव का वाइटल इन्डेक्स होता है –

(अ) वाइटल इन्डेक्स = $\frac{\text{जन्म दर}}{100}$ × मृत्यु दर

(ब) वाइटल इन्डेक्स = $\frac{\text{जन्म दर}}{\text{मृत्यु दर}}$ × 100

(स) वाइटल इन्डेक्स = जन्म दर + मृत्यु दर × 100

(द) वाइटल इन्डेक्स = $\frac{\text{जन्म दर + मृत्यु दर}}{100}$

4. लिंगानुपात दर्शाने हेतु किस सूत्र का प्रयोग करते हैं –

(अ) $SR = \frac{M+F}{1000}$ (ब) $SR = \frac{M}{F} \times 1000$

(स) $SR = \frac{F}{M} \times 1000$ (द) $SR = \frac{1000}{M+F}$

5. तीव्र गति से वृद्धि कर रही समष्टि को किस आयु स्तूप द्वारा दर्शाया जाता है –

(अ) कुम्भाकार स्तूप

(ब) घण्टाकार स्तूप

(स) वृहत् आधार वाला स्तूप

(द) इनमें से कोई नहीं

6. कुम्भाकार स्तूप द्वारा किस प्रकार की समष्टि को दर्शाया जाता है –

(अ) तीव्र गति से वृद्धि कर रही

(ब) पतनशील

(स) स्थिर वृद्धि कर रही

(द) कम वृद्धि कर रही

7. किसी स्थान पर किसी निश्चित समय पर जीव की किसी प्रजाति के जीव वहां ओर आ जाते हैं तो उस समय उस स्थान पर जीव की जनसंख्या –

(अ) घट जायेगी

(ब) बढ़ जायेगी

(स) कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा

(द) नर जनसंख्या खत्म हो जायेगी

8. किसी भी स्थान पर उपस्थित विभिन्न जीव जातियों का समूह कहलाता है –

(अ) जनसंख्या (ब) समुदाय

(स) निशे (द) इनमें से कोई नहीं

9. किसी भी पादप जाति की प्रतिशत आवृत्ति ज्ञात करने के लिए निम्न सूत्र प्रयोग में लाते हैं –

(अ) $\frac{\text{क्वाड्रेट्स की संख्या जिनमें जाति उपस्थित}}{\text{अध्ययन किये गये कुल क्वाड्रेट्स}} \times 100$

(ब) $\frac{\text{अध्ययन किये गये क्वाड्रेट्स की संख्या}}{\text{सभी क्वाड्रेट्स में कुल जातियां}} \times 100$

(स) $\frac{\text{सभी क्वाड्रेट्स में उपस्थित कुल जातियां}}{\text{अध्ययन किये गये क्वाड्रेट्स की संख्या}} \times 100$

(द) $\frac{\text{सभी क्वाड्रेट्स में उपस्थित जातियां}}{\text{अध्ययन किये गये क्वाड्रेट्स की कुल संख्या}}$

10. जनसंख्या वृद्धि के कारण है –

(अ) जन्म दर अधिक (ब) आप्रावासन

(स) मृत्यु दर कम (द) उपरोक्त सभी

अति लघूत्तरात्मक प्रश्न (Very Short Answered Questions)

1. समष्टि क्या है?
2. जन्म दर किसे कहते हैं?
3. मृत्यु दर क्या है?
4. आयु स्तूप क्या होते हैं?
5. लिंगानुपात किसे कहते हैं?
6. जैविक विभव से क्या तात्पर्य है?
7. वाइटल इन्डेक्स ज्ञात करने का क्या सूत्र है?
8. अनुक्रमण क्या है?
9. प्राथमिक व द्वितीयक अनुक्रमण में क्या अन्तर है?
10. समुदाय की परिभाषा दीजिए?

11. संक्रमिका क्या है?
12. पादप बाहुल्यता क्या है?
13. सघनता व बाहुल्यता में क्या अन्तर है?
14. पादप आवृत्ति क्या है?
15. जलक्रमक किसे कहते हैं?

लघूत्तरात्मक प्रश्न (Short Answered Questions)

1. जन्म दर व मृत्यु दर में क्या अन्तर है?
2. समष्टि के क्या प्रमुख लक्षण है?
3. वृद्धि आकार को किन प्रतिरूपों द्वारा दर्शाया जा सकता है?
4. आयु स्तूप किसे कहते हैं। इसे पिरामिड द्वारा कैसे दर्शाया जाता है?
5. लिंगानुपात की गणना किस प्रकार की जाती है?
6. जैविक विभव पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
7. पादप समुदाय के प्रमुख लक्षण क्या है?
8. पादप समुदाय के अध्ययन की विभिन्न विधियां क्या है?
9. अनुक्रमण क्या है? इसके विभिन्न चरणों का वर्णन कीजिए।
10. जलक्रमक व मरुक्रमक में क्या अन्तर होता है? समझाइए।
11. जैव आक्रमण क्या है? समझाइए।

निबन्धात्मक प्रश्न (Long Answered Questions)

1. निम्न पर टिप्पणी लिखिए –
   (अ) जन्म दर (ब) मृत्यु दर
   (स) लिंगानुपात (द) आयु स्तूप
2. समष्टि के विभिन्न लक्षणों का विस्तार से वर्णन कीजिए।
3. जलक्रमक के विकास की विभिन्न अवस्थाओं का वर्णन कीजिए।
4. मरुक्रमक अनुक्रमण की विभिन्न अवस्थाओं का विस्तार से वर्णन कीजिए?
5. पादप समुदाय के परिमाणात्मक व गुणात्मक लक्षणों को समझाइए।

उत्तरमाला: 1. (अ) 2 (ब) 3 (ब) 4 (ब) 5 (स) 6 (ब) 7 (ब) 8 (ब) 9 (अ) 10 (द)